सुधा बीज बोने से पहले कालकूट पीना होगा ।
पहन मौत का मुकुट, विश्व-हित मानव को जीना होगा ॥

भाग २] मथुरा, २० अक्टूबर सन् १९४१ [अंक १०
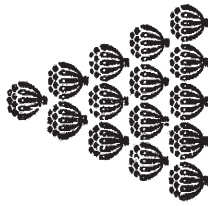
जागृति-गान

रचयिता—श्री० कल्याणकुमार जैन "शशि"
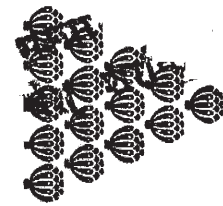
(१)

उत्थान पतन का भेद जान
जीवन मृत्यु का कर निदान
केवल जीवन, जीवन न मान
हठ वाद छोड़, जड़ वाद त्याग !
उठ, सोये जीवन जाग जाग !

(२)

जब जड़ता में जीवन विकास
पा रहा पनप कर पूर्ण ह्रास
तू शक्ति केन्द्र है कर प्रयास
विकसा कर नव साहस पराग !
उठ, सोये जीवन जाग जाग !

(३)

यदि साहस सोता है सँभाल
जग डूब रहा है तो उछाल
बन दिव्य ऐतिहासिक मिसाल
कायर जीवन में लगा आग !
उठ, सोये जीवन जाग जाग !

(४)

यह सोने की वेला न भ्रात
आँखें खोलो देखो प्रभात
अब सोना है विश्वासघात
विश्वासघात है पतन नाग !
उठ सोये जीवन जाग जाग !

सुधा बीज बोने से पहले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकट, विश्व-हित मानव को जीना होगा॥

मथुरा, २० अक्टूबर सन् १९४१

दिवाली।

दीपावली का उत्सव इस साल भी सदा की भाँति आया और विदा हो रहा है। शत-शत दीप जलाकर हम अपने घरों को सुशोभित बनाते हैं, माता लक्ष्मी की आराधना करते हैं कि वे अपनी कृपा कोर से हमें निहाल करदें। हर साल हम इस पुण्य पर्व को नवीन आशा के साथ मनाते हैं पर सब व्यर्थ चला जाता है, भगवती प्रसन्न नहीं होतीं

आज तो वे क्रुद्ध हो रही हैं, दरिद्रता का ताण्डव नृत्य हो रहा है। हर चीज़ की असाधारण मँहगाई, उत्पादन क्षेत्रों का शुष्क हो जाना, अतिवृष्टि अनावृष्टि का प्रकोप ऐसा उग्र रूप धारण किये हुए है कि पैसे की सर्वत्र कमी दिखाई देती है, हर व्यक्ति अर्थ चिन्ता से दुखी हो रहा है, व्यवहार-कारोबार, उद्योग, मजूरी किसी भी ओर संतोष की सांस लेने का अवकाश नहीं है। अभाव और चिन्ता की ज्वाला में गृही विरागी सभी जले जा रहे हैं।

जिस दिन दीप दान हुआ, घृत और तैल के भरे हुए दीप आलों, झरोखों और मुंडेरों पर जगमगाये उस दिन भी विश्व सुख की नींद नहीं सोया। असंख्यों निरीह व्यक्ति बारूद की भट्टी में ऐसे ही भून दिये गये जैसे भड़भूजा चने को भून देता है। जगती की पीठ रक्त की धाराओं से लाल हो रही है, प्रभु के प्रिय पुत्रों का इस प्रकार संहार करने में आज का सभ्य जगत बड़े गर्व के साथ लगा हुआ है।

माता लक्ष्मीजी हमारी उपासना पर प्रसन्न होने की अपेक्षा ऐसा भयंकर रूप धारण करके विनाश के मुंह में हमें क्यों ढकेले दे रही हैं ? पाठको! शान्त मन से जरा इस प्रश्न पर विचार करो। आपने बहुत सा समय फूटे हुए मकानों पर सफेदी कराने और टूटे हुए किवाड़ों पर रङ्ग कराने में लगाया है। अब थोड़ा समय इस बात के चिन्तन में भी लगाइये कि हमारी आराधना से सन्तुष्ट होने के स्थान पर नाश का वज्र दंड क्यों उठाया जा रहा है।

कहते हैं कि मनुष्य ने पिछली शताब्दियों में ज्ञान विज्ञान की नवीन शोध की है, उसने बड़े २ यंत्र, औजार, साधन, सिद्धान्त आविष्कृत किये हैं। और वह इस नतीजे पर पहुँचा है कि-"जीवन शरीर तक ही है इसलिये खाओ पीओ मौज उड़ाओ।" देह को भस्मी भूत समझते हुए 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' के सत्यानाशी मार्ग पर मनुष्य दौड़ पड़ा है। "धर्म ठगों का पेशा है, ईश्वर डरपोकों की कल्पना है, त्याग मूर्खों की सनक है।" आज का भौतिक विज्ञान इन उक्तियों का प्रतिपादन करता है, और चकाचौंध में अन्धे हुए लोग इन उक्तियों के सामने मस्तक झुका देते हैं। मनुष्य जीवन की इस शैतानी व्याख्या का अनेकानेक तर्कों के आधार पर प्रतिपादन किया गया है, फल स्वरूप भूमंडल के एक कौने से दूसरे कौने तक यह विश्वास किया जाने लगा है कि-शरीर आत्मा है। शरीर ही उपासनीय है, भोग ही आत्मानंद है। कुच कांचन को जीवन का उद्देश्य बनाकर आदमी पिशाच के रूप में आ गया है। उसका एक मात्र स्वार्थ ही परमेश्वर बना हुआ है।

स्वार्थ यह तो एक बड़ी भारी अतृप्त इकाई है। कितने विषय भोग, सुख सम्पदा से तृप्ति हो सकती है इसकी कोई मर्यादा नहीं। तृष्णा अनन्त है, वह निरन्तर बढ़ती रहती है और क्षितिज के छोर तक, जब तक मनुष्य चिता पर चढ़ता है तब तक 'और लाओ' की ही रट लगी रहती है। इन्द्रिय तृप्ति का मार्ग है ही ऐसा। कहते हैं कि अगस्त ऋषि इस भूतल के सब समुद्रों का पानी पीकर तृप्ति हो गये थे परंतु स्वार्थ पूर्ण सुखेच्छा सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों को पी कर भी शान्त नहीं हो सकती। अपने लिये अधिक चाहने की इच्छा में, व्यक्ति, परिवार, नगर और देश अपने सदृश्य दूसरों का शोषण करना चाहते हैं, क्योंकि प्रकृति द्वारा बराबर दी हुई चीज़ों में से अधिक तो तभी मिल सकती है जब दूसरे का शोषण किया जाय, दूसरे के मुख का ग्रास छीन लिया जाय। शोषण एक प्रचण्ड दैत्य है जिसको पीछे-पीछे बड़े कराल दाँतों वाले भूत भैरवों की सेना चलती है। स्वार्थ से शोषण और शोषण से कलह होता है। प्रभु की पवित्र सृष्टि में कुहराम मचाना या मचने देना यह एक बड़े पातक हैं, ऐसे पातकियों के घरों में लक्ष्मीजी नहीं रहना चाहती वे अपने पिता के घर वापिस जा रही हैं। समुद्र से वे प्रकट हुई थीं और समुद्र में ही विलीन होने की इच्छा करती हैं। कंस ने शिला पर पटक कर आदि शक्ति को मारा था, हम उसे तोप के मुंह पर उड़ा रहे हैं। ऐसी दशा में कौन आशा करेगा कि मां लक्ष्मी हम से प्रसन्न होंगी।

भूल के मार्ग पर चलता हुआ मनुष्य सर्वनाश के खंदक के निकट मरने के लिये पहुँच गया है। यदि वह वापिस न लौटा तो उसे भगवती का और भी अधिक कोप सहन करना पड़ेगा। मानव-धर्म के यथार्थ स्वरूप को हमें ढूंढना होगा और पुनः उसका अवलम्बन करके अपने इष्ट मार्ग पर आवृत होने का प्रयत्न करना होगा। ईश्वर ने मानव-प्राणी को इस संसार में इसलिये नहीं भेजा है कि अपने स्वार्थ के लिए दूसरों के हित का हनन करे और उचित अनुचित रीति से अपनी आसुरी लालसाओं को तृप्त करे। वरन् इसलिये भेजा है कि अपनी दिव्य-शक्ति का सहारा देकर अपने से छोटों को ऊपर उठावें, उन्नत बनावें और सुमार्ग पर प्रवृत्त करें। अपने तुच्छ स्वार्थों को दूसरों के सुखों के लिए छोड़कर उन्हें सुखी बनाने में अपने को सुखी समझें। किन्तु हाय! हम अपने इस जीवनोद्देश्य को तो बिल्कुल ही भूल गये हैं, जिस वाटिका के माली बना कर भेजा गया था, उसे काटने में लगे हुए हैं। फिर भी चाहते हैं कि माता लक्ष्मीजी प्रसन्न होकर हमें सुख शान्ति प्रदान करें।

ठहरिए, पीछे लौटिये, अपने स्वार्थों की अतृप्त लालसा को छोड़कर, दूसरों के लिए त्याग करना सीखिए। अपने हृदय के दीपक में प्रेम का रस भरकर उसे त्याग की अग्नि द्वारा जलने दीजिए। इसी दीपक के प्रकाश में आज का पीड़ित और मतिभ्रमित संसार अपने कल्याण का मार्ग पा सकेगा। अपने हृदय में त्याग और प्रेम के दीपक जलाइए, दूसरों के लिए अपने सुख छोड़ दीजिए, सब को अपना समझिए और आत्मीयता की भावना से उन्हें देखिए। त्याग का यह आदर्श आज के कलह-कष्टों को सदा के लिए हटा सकेगा। चालीस करोड़ दीपकों का प्रकाश, संसार भर का पथ-प्रदर्शन कर सकेगा और रूठी हुई लक्ष्मी को वापिस बुला सकेगा।

आत्मा का साक्षात्कार।

अग्नितत्व संसार में सब जगह व्याप्त है, परंतु वह दो वस्तुओं को घिसे बिना प्रकट नहीं होती। आत्म शक्ति, परमात्म शक्ति का ही एक भाग है। परमात्मा समस्त संसार में समाया हुआ है। हमारी आत्मा उसी महातत्व की एक चिनगारी है। जैसे चिनगारी को ईंधन आदि के उपयुक्त साधन मिलें तो वह अपने छोटे रूप को असंख्य गुना करके भीषण दावानल के रूप में प्रकट हो सकती है, उसी तरह हमारी आत्मा छोटी सी, अल्प शक्ति वाली मालूम पड़ती है, परन्तु परमात्मा का अंश होने की वजह से उसकी पीठ भारी है। किसी राजकुमार को हम मामूली लड़के की तरह तुच्छ नहीं समझ सकते, क्योंकि उसके पिता के पास बड़ी भारी ताकत होती है। राजकुमार से बुरा व्यवहार किया और उसने अपने पिता से शिकायत कर दी तो बस उसकी खैर नहीं है। आत्मा महान् परमात्म तत्व का अंश है, चिनगारी की तरह जब उसे जितनी शक्ति प्राप्त करनी होती है आसानी से प्राप्त कर लेती है, इसी लिये शास्त्रों ने आत्मा को अजर, अमर, अखण्ड और नित्य आदि गुणों वाली बताया है।

जैसे अग्नि प्रकट करने के लिये लोहा, चुम्बक या दियासलाई घिसनी पड़ती है, वैसे ही आत्मा का दर्शन करने के लिये कुछ साधन करना पड़ता है। कहा है कि—

स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्मथनाभ्यासद्देवं पश्येन्निगूढ़वत्॥

अर्थात्-अपने शरीर को नीचे की अरणि (अग्नि उत्पन्न करने की लकड़ी) और प्रणव को ऊपर की अरणि बनाकर ध्यान रूप मंथन के अभ्यास से अपने हृदय में गुप्त रूप से रहने वाले परमात्मा (आत्मा) को देखना चाहिये।

ब्रह्मनिष्ठ पं० नारायणजी दामोदरजी शास्त्री का अनुभव है कि—"प्रत्येक मनुष्य का आत्मा अपने मूल स्वरूप में निर्गुण निराकार एवं नाम रूप रहित होकर भी शुद्ध सत्वमय अन्तकरण में प्रकाश रूप से उसका दर्शन होता है और वह दर्शन होने पर मनुष्य सत्यकाम, सत्य सङ्कल्प होकर अखण्ड सुख और परम शान्ति प्राप्त होती है, फिर उसे इस संसार में कोई भी वस्तु प्राप्त करने की नहीं रहती। वह जो इच्छा या सङ्कल्प करता है, वह बिना किसी प्रयत्न के तत्काल सिद्ध हो जाता है। उसका यह अमूल्य और दुर्लभ जीवन सफल होजाता है। इसलिये प्रत्येक मनुष्य को अपने प्रकाश स्वरूप आत्मा का प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिये प्रयत्नशील होना चाहिये, जिससे उसका यह जीवन सफल हो। आत्मा प्रकाश रूप है यह उपनिषदादि ग्रन्थों में अनेक जगह प्रतिपादित किया हुआ है। जैसे—

'अंगुष्ठ मात्रः पुरुषो ज्योतिरिवा धूमकः।'
'अंगुष्ठ मात्रो रवि तुल्य रूपः।',
'तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिः।' आदि,

केवल शास्त्रों के वर्णन की ही बात नहीं है। जिन महा पुरुषों को प्रकाश रूप आत्मा का दर्शन हुआ है, उन्होंने भी स्वयं अपने अनुभव का ऐसा ही वर्णन किया है। और जो साधक इस विषय का अभ्यास करेंगे उनका भ ो आत्मा का प्रकाश सब में अवश्य दर्शन होगा। यह अनुभव का विषय है। केवल सुनने, पढ़ने मात्र से कुछ नहीं होता।

जब तुम्हें फुरसत हो, बिलकुल एकान्त कमरे में जाओ। प्रातःकाल का या दिन छिपे बाद का समय इस अभ्यास के लिये उत्तम है, फिर भी यह कोई विशेष प्रतिबन्ध नहीं है, जब अवसर मिले तभी सही। कमरे में अन्दर जाकर उसके दरवाजे बन्द करलो, हां थोड़ा सा प्रकाश आने के लिये खिड़कियां खुली रख सकते हो। कमरे में आराम कुर्सी पर लेट जाओ। आराम कुर्सी न हो तो मुलायम बिछौने पर मसन्द के सहारे पड़ रहो।

यहां किसी कष्टकर आसन पर बैठने की जरा भी जरूरत नहीं है। जिस तरह तुम्हारा शरीर आराम का अनुभव करे उसी तरह पड़ रहना ठीक है, चाहो तो लेट भी सकते हो, पर शिर शरीर की अपेक्षा कम से कम एक फुट ऊँचा जरूर रहना चाहिये। शरीर को आराम से डाल दो और आंख बन्द करलो। अब देह को बिलकुल ढीली करने की कोशिश करो। मानो इसमें जान ही नहीं है, रूई का निर्जीव गद्दा पड़ा हुआ है। पहले ही दिन शायद यह अभ्यास पूरा नहीं हो सकेगा क्योंकि नाडियों का तनाव ढीला करने का पहला अभ्यास न होने के, कारण नसें और पेशियां अकड़ी ही रहती हैं। पन्द्रह मिनट से लेकर आध घण्टे तक का समय इसी कोशिश में लगाओ। ऐसा अनुभव करो मानो 'तुम' अपने शरीर से अलग होगये हो और दूर खड़े हुये इस निर्जीव पुतले को देख रहे हो। एक सप्ताह के आभास में शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ना तुम से आ जायगा। यह दशा बड़े आनन्द की है। शरीर को दिन रात कड़ा काम करना पड़ता है। उसे यदि कभी कभी इस तरह का आराम कुछ ही देर को मिल जाय तो बड़ी शान्ति का अनुभव करता है। सारे दिन बोझा ढोने वाला मजूर यदि आध घण्टे को भी सुस्ताले तो उसे बड़ा आनन्द आता है। शरीर को ढीला छोड़ने पर तुम्हें बड़ा अच्छा लगेगा और मन को भीतर एक प्रकार की स्थिरता और शान्ति का अनुभव करोगे।

एक सप्ताह इस शिथिलासन का अभ्यास करने के बाद अब आगे की ओर बढ़ो। अपना ध्यान श्वांस के आवागमन पर लगाओ। नाक के रास्ते जब सांस भीतर जाय तो अनुभव करो कि वह जा रही है, जब निकले तब भी अनुभव करो। अर्थात् मानो तुम एक चौकीदार हो और इस बात को अच्छी तरह जांच करना तुम्हारा काम है कि सांस कब आती है और कब जाती है। मन को इधर उधर डिगने मत दो, श्वास के आवागमन पर ध्यान लगाते रहो। यह 'ब्रह्म प्राणायाम' है। इसे करते समय अपने मानस लोक को शून्य रखो। भावना करो कि तुम्हारा मस्तिष्क ही अनंत आकाश है, इसके अतिरिक्त विश्व में कहीं कोई वस्तु नहीं है। मस्तिष्क के अन्दर का भाग बिलकुल पोला और नील आकाश की तरह अनन्त है। इसी आकाश में प्राणवायु आ जा रही है। "मस्तिष्क के अन्दर नीलाकाश जैसा शून्य मानस लोक और उसमें प्राणवायु का आना जाना।" बस, इन दो ही बातों का चित्र तुम्हारे मन पर अङ्कित होना चाहिये। समस्त ध्यान जब इन्हीं दो बातों को देखने में लगेगा तो दो चार दिन अधिक से अधिक एक सप्ताह में यह भावना दृढ़ हो जायगी। इन दो बातों के अतिरिक्त ध्यान के समय और कुछ मालूम ही न होगा। यदि मन उचटे तो निरुत्साहित होने की जरूरत नहीं है, उसे रोको और फिर वहीं लगाओ। कुछ दिन के अभ्यास से वह की तरह उपरोक्त भावना का अनुभव करने लगेगा।

पहले बताया गया है कि शरीर को नीचे की अरणि और प्रणव को ऊपर की अरणि बनाकर ध्यान रूप मंथन के अभ्यास से अपने अन्दर रहने वाले प्रकाश स्वरूप आत्मा का दर्शन करना चाहिये। शून्य लोक में प्राणवायु का घर्षण होने से आत्म-ज्योति प्रकट होती है। थोड़े दिनों के अभ्यास से जब कुछ-कुछ मनोलय होने लगता है तो मानस लोक में अन्तर्दृष्टि से सफेद, लाल, पीले आदि रङ्गों के विन्दु, चक्र की तरह घूमते हुए दिखाई देते हैं। फिर कुछ दिनों बाद उनका लोप होकर नीलवर्ण का विन्दु दिखाई देता है। बाद में अभ्यास से जब मनोलय अधिक होता जाता है, तब सूर्य, अर्धचन्द्र, चन्द्र, तारे, मोती, पुष्पों के गुच्छे, इन्द्र नील आदि चमकते हुए अनेक रत्न तथा सफेद रङ्ग के चक्र एक दूसरे में प्रवेश करते हुए दिखाई देते हैं। तब साधक को समझना चाहिये कि अब शीघ्र ही आत्मा का

दर्शन होने वाला है और वैसा होना भी है। अर्थात् कुछ समय के बाद उपरोक्त दृश्यों का लोप होकर आखिर में आत्मा को अत्यन्त शुभ्र और तेजस्वी प्रकाश का दर्शन होता है। उसमें साधक का पूर्ण मनोलय होकर उसे समाधि अवस्था प्राप्त होती है, इस अवस्था में उसे जिस सुख, शान्ति, तृप्ति और समाधान का अनुभव होता है; उसकी संसार भर के किसी भी विषय से होने वाले सुख से तुलना नहीं हो सकती।

कई बार यह आत्म दर्शन बहुत जल्द हो जाता है। जिसका अन्तस्थल जितना पवित्र होगा उसे उतनी ही जल्दी सफलता मिलेगी। कभी-कभी तो एक दो सप्ताह में ही शिथिलासन, ब्रह्म प्राणायाम पूरे होजाते हैं, और आत्म प्रकाश का दर्शन होने लगता है। पाठको! तुम्हारे पूर्वज महर्षियों ने जिस योग विद्या के बल से संसार में अपना सिक्का जमाया था, उसी महा विद्या का यह छोटा सा अंग तुम्हारे लिये बहुत उपयोगी होगा। भगवती आत्म शक्ति का दर्शन करके तुम निर्भय, अमर और जैसी दिव्य गुण सम्पन्न बन जाओगे।

धर्म का मुख्य मार्ग यहहै कि कर्त्तव्य-पालन करो, तो वह अवश्य मिल जायगा। कर्त्तव्य पालन करने में मनुष्य से डरने की जरूरत नहीं है। ईश्वर से डरने की जरूरत है।

* * ❀ *

सदाचार के द्वारा तुम प्रभु के सेवक होजाओ, तो फिर जैसी प्रतिज्ञा उसने कर रखी है—तुम्हें फिर किसी बात की आवश्यकता न रहेगी। सच्चा अर्थ शास्त्र इसी को कहते हैं।

* * ❀ *

जो सद्‌गुणी है, वही बुद्धिमान है। वही सज्जन है। जो सज्जन है, वह सदा सुखी है।

❀ ❀ ❀ ❀

जो मनुष्य विवाद करना नहीं जानते हैं, वे बहुधा लड़ते रहते हैं।

* * * ❀

श्री रामकृष्ण—
परमहंस के उपदेश।

मुट्ठी में लगे हुए आम को यदि दबाया जाय तो उसका कुछ रस बाहर निकल पड़ता है पर गुठली और छिलका हाथ में ही लगा रहता है। कष्ट पड़ने पर सत्पुरुषों की आँखों से आँसू तो निकल पड़ते हैं पर उनका धर्म विचलित नहीं होता।

× × × ×

सुई की नोंक में डोरे को तब पिरोया जा सकता है जब डोरे के सिरे को बटकर नोंकदार बना लिया जाय। ईश्वर के मार्ग में वे प्रवेश कर सकते हैं जो अपने मन को विनम्र और निर्मल बना लेते हैं।

× × × ×

तराजू का वही पलड़ा झुका रहेगा जिसमें बोझ अधिक होगा। नम्र और सरल वह होगा जिसके पास विद्या और विवेक का बोझ होगा।

× × × ×

जिस घड़े के पेंदे में छोटा सा भी छेद होजाता है उसमें पानी नहीं ठहरता। जिस मनुष्य का आचरण बुरा है उसमें सद्‌गुण नहीं ठहरते।

× × × ×

कसौटी पर घिसने से मालूम हो जाता है कि सोना खोटा है या खरा। संकट के समय विचलित न होने पर पता चलता है कि मनुष्य बुरा है या भला।

× × × ×

अग्नि के सत्सङ्ग से काला कोयला, सुनहरी रङ्ग का हो जाता है। सत्पुरुषों के सत्संग से अज्ञान की कालिमा मिट जाती है और हृदय में ज्ञान का प्रकाश होने लगता है।

× × ÷ ×

फिजूल शोक नहीं करना चाहिये। हमेशा प्रसन्न रहिये। चित को कोमल, तथा हर्षान्वित बनाओ।

* * * *

दत्तात्रय के २४ गुरू

(गतांक से आगे)

ग्यारह गुरु बना लेने पर भी दत्तात्रय को अपना ज्ञान अपूर्ण ही मालूम हुआ और वे अधिक ज्ञान की खोज में आगे को चल दिये। चलते चलते एक सुन्दर बगीचा उन्हें मिला जिसमें तरह २ के पुष्प खिल रहे थे, अनेक पक्षी गुंजार कर रहे थे, पास ही सुन्दर जलाशय था। शीतल और सुगन्धित वायु से उपवन बड़ा ही रमणीक प्रतीत होता था। कुछ समय यहीं ठहर कर ज्ञान लाभ करने के लिये उनने डेरा डाल दिया और वहाँ की वस्तुओं को जिज्ञासु भाव से देखने लगे।

उनने देखा कि मधु मक्खी संचय का अत्यंत लालच करके फूलों से शहद इकट्ठा कर रही है। उसे न तो स्वयं खाती है और न किसी को देती है, वरन् जोड़ जोड़ कर रखती जाती है। परिणाम यह होता है कि बहेलिये उस शहद को ले जाते हैं और मधु मक्खी के हाथ पछताना ही रह जाता है। दत्तात्रय ने दूसरी तरफ आंख उठाई तो देखा कि सुगन्ध की वासना से कभी तृप्त न हने वाला भौंरा कमल पुष्प में ही कैदी हो जाता है और रात भर बन्धन की पीड़ा सहता रहता है। इसी प्रकार उन्होंने एक पतंग देखा जो दीपक की सुन्दरता देख कर ही तृप्त नहीं हो जाता, वरन् उसे अपने पास रखना चाहता है, उस पर अधिकार करना चाहता है। फल यह होता है कि दीपक का तो कुछ नहीं बिगड़ता, पतंग के ही पंख जल जाते हैं। उन्होंने एक चील को देखा जो अपने घोंसले में बहुत सा माँस जमा करती जाती थी, इसे देख कर बाज आदि अन्य शिकारी पक्षी उसके घोंसले पर टूट पड़े तो सारा संग्रह किया हुआ माँस उठा लेगये। ऋषि ने एक हिरन देखा जो शिकारियों की बीणा का गाना सुनकर मुग्ध होरहा था। मोहित देखकर शिकारियों ने उसे पकड़ लिया और मार डाला। इसी तरह उन्होंने आटे के लोभ में मछली को जाल में फँसते और नकली हथिनी के साथ रमण करने की इच्छा करने वाले हाथी को गड्ढे में फँसकर पकड़े जाते देखा। इस सबको देखकर वे सोचने लगे इन्द्रियों की वासनाओं की गुलामी तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह के चंगुल में फँसना प्राणी के जीवनोद्देश्य को नष्ट कर देना है। यह शिक्षायें उन्हें मधुमक्खी, भौंरे, पतंग, चील, हिरन, मछली और हाथी से प्राप्त हुई इसलिये इन्हें भी उन्होंने अपना गुरू बना लिया।

यहां से उठ कर ऋषि आगे चले और देखा कि एक भील परिवार जनशून्य जंगल में रहता है और वहां भी उसे अन्न-वस्त्र मिलता है। वे सोचने लगे मनुष्य "कल क्या खायेंगे इस चिन्ता में मरे जाते हैं वे इस भील से सीख सकते हैं कि परमात्मा के भन्डार से हर किसी को नियत समय पर भेजा जाता है। उसे भी उसने गुरु मान लिया। वन्य प्रदेश को पार करते हुए वे एक बड़े नगर में पहुँचे। नगर के बाहर एक बाण बनाने वाला रहता था, दूर दूर तक उसके शस्त्रों की प्रशंसा थी। उसने सोचा कि इसके बारे में भी जानें कि किस प्रकार यह इतने उत्तम बाण बनाने में प्रसिद्ध होगया है। वे उसके द्वार पर पहुंचे और देखा कि चारों ओर बड़ा कोलाहल होरहा है, बाजे और बरातें सामने से निकल रही हैं, पर वह अपने काम में दत्तचित है, किसी की ओर निगाह उठा कर भी नहीं देखता, इसी एकाग्रता के कारण वह इतने उत्तम हथियार बनाने में सफल होता है। उसकी एकाग्रता की शिक्षा लेते हुए उनने उसे भी गुरु भाव से प्रणाम किया।

शहर में घुसने पर उनने देखा कि एक वेश्या बार बार दरवाजे पर आती है और लौट जाती है

बहुत रात व्यतीत होने पर भी उसे निद्रा नहीं आती। दत्तात्रेय ने उससे पूछा-इतनी रात व्यतीत होजाने पर भी तुम्हें निद्रा क्यों नहीं आती और किस लिए चिन्तित हो रही हो? वेश्या ने उत्तर दिया-महानुभाव-किसी धनी मित्र के आने की आशा मुझे व्याकुल किये हुए है। परन्तु कोई आता नहीं। जब तक आश लगाये बैठी रहती हूँ, तब तक नीद नहीं आती और जब परमात्मा का भार डाल कर निश्चिन्त हो जाती हूँ, तो नींद आजाती है। दत्तात्रय ने सोचा कि परमात्मा पर निर्भर न रहना ही दुख का कारण है। इस शिक्षा को लेकर उन्होंने वेश्या को गुरु बना लिया। आगे चले तो देखते हैं कि एक लड़की रात में घर का काम-काज कर रही है, उसके यहाँ कुछ अतिथि आये हुए हैं, वह संकोच वश अपने काम की खड़बड़ में अतिथियों की निद्रा भंग नहीं करना चाहिये, किन्तु काम करने से चूड़ियां तो बजती ही हैं, फिर वह सब चूड़ियों को उतार देता है और केवल एक एक ही पहने रहती है। बस अब उनका बजना बन्द होजाता है। ऋषि सोचते हैं कि बहुत इकट्ठा करने से वह बजता है, किन्तु एक की ही साधना करने से-एक एक चूड़ी रह जाने की तरह शोर मिट जाता है और शान्ति मिल जाती है, ऋषि उस लड़की को भी गुरू बना लेते हैं। आगे उनने एक बालक को देखा जिसमें सांसारिक माया का प्रवेश नहीं हुआ है। और उसका हृदय बिल्कुल पवित्र है। पवित्र हृदय वाला ही सच्चा योगी है; ऐसा समझते हुए उन्होंने उस बच्चे को भी गुरु बनाया।

इतने गुरु बनाते हुए अब वे समुद्र के किनारे हुँचे और देखा कि उसमें हजारों नदियाँ आकर मिलती हैं और अपरिमित जल बादलों द्वारा चला जाता है। वह इस हानि लाभ की तनिक भी परवाह नहीं करता और हर परिस्थिति में एक सा बना रहता है। उनने उसे भी गुरु बनाया। अन्त में उनकी दृष्टि एक मकड़ी पर गई जो अपने मुँह से तार निकालती थी, उस पर चढ़ती थी मनोरंजन करती थी और जब चाहती थी उन तारों को समेट कर पेट में रख लेती थी। इसे देखते ही उनकी आँखें खुल गईं और जिस ज्ञान का अभाव अपने में देख रहे थे वह पूरा होगया। मकड़ी का कार्य उनने मनुष्य पर घटाया तो उनकी समझ में आया कि जीव सारे प्रपंच अपने अन्दर से ही निकालता है और उन्हीं में उलझा रहता है, किन्तु यदि वह सच्ची इच्छा करे तो इन सारे बखेड़ों को अपने अन्दर ही समेट कर रख सकता है और मुक्ति का अधिकार प्राप्त कर सकता है। जो कुछ भला बुरा है वह अपने ही अन्दर है। हम खुद ही परिस्थितियों का निर्माण करते हैं किन्तु दूसरों पर अज्ञान वश उनका आरोपण करते रहते हैं। दत्तात्रय को पूरा सन्तोष होगया और उन्होंने मकड़ी को चौबीसवाँ गुरु बनाते हुए उसे नत मस्तक होकर प्रणाम किया और आश्रम को वापिस लौट गये।

× × × ×

लोग तलाश करते हैं कि हमें धुरंधर गुरु मिले जो चुटिकियों में बेड़ा पार करदें। परन्तु ऐसे प्रसंग बहुत ही कम आते हैं। कभी कभी ऐसे उदाहरण देखे भी जाते हैं, तो उनका वास्तविक कारण यह होता है कि उस विषय में शिष्य के पास पर्याप्त संस्कार जमा होते हैं और वे संयोग वश एक ही झटके में खुल जाते हैं। साधारणतः हर व्यक्ति को किसी कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिये स्वयं ही प्रयत्न करना पड़ता है, गुरु चाहे कितने ही योग्य क्यों न हों, यदि शिष्य का मन दूषित है तो उसे रत्ती भर भी लाभ न मिलेगा। इसके अतिरिक्त यदि शिष्य के हृदय में श्रद्धा है तो उसके लिये मिट्टी के गुरू भी साक्षात् सिद्ध रूप होंगे।

दुःख का कारण

(ले० पं० भोजराज शुक्ल ऐत्मादपुर, जिला आगरा)

संसार के भोगों में जो राग है, वही इस लोक और परलोक में दुःख का हेतु है, इन से जो वैराग्य है, वही दोनों लोकों में सुख का हेतु है, राग ही अज्ञान का चिन्ह है, स्वामीं विद्यारण्यजी महाराज का वचन है।

रागो-लिंगमबोधस्य चित्त व्यायाम भूमिषु।
कुतः शाद्वलता तस्य, यस्याग्निः कोटरे तरुः॥

चित्त की विस्तृत भूमि में अज्ञान के चिन्ह पदार्थों में राग ही है। जिस वृक्ष के कोटर में आग लगी है, उस वृक्ष में हरियाली कैसे हो सकती है, कदापि नहीं।

जिन पुरुषों का स्त्री पुत्रादि भोगों में राग बना है, उन को नित्य सुख की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती। अब प्रश्न यह उठता है कि "गृहस्थाश्रम में रह कर स्त्री पुत्रादिकों में राग तो अवश्य ही कुछ न कुछ बना ही रहेगा राग का अभाव तो किसी काल में भी न होगा। तब गृहस्थाश्रमी की मोक्ष कदापि नहीं होनी चाहिये।" इस प्रश्न का समाधान यह है कि ऐसा नियम नहीं है, जो गृहस्थाश्रम में सदैव काल स्त्री पुत्रादिकों में राग ही बना रहे. किसी काल में भी उनसे वैराग्य न हो। किन्तु ऐसा नियम तो है कि, गृहस्थाश्रम में एक न एक दुःख अवश्य बना रहता है, उस दुःख के बने रहने से कुछ न कुछ वैराग्य भी बना रहता है, क्योंकि विषयों में दुःख बुद्धि वैराग्य का हेतु तथा सुख बुद्धि राग का हेतु है, जिस समय स्त्री पुत्रादिकों को कोई कष्ट उपस्थित होता है, उसी क्षण मनुष्य अपने को तथा संसार को धिक्कार देने लगता है, जब वह कष्ट हट जाता है, फिर उसका वैराग्य भी नहीं रहता। जितने बड़े बड़े महात्मा पूजनीय हुए हैं, जैसे श्रीरामचन्द्रजी, वशिष्ठजी, जनक इत्यादि इन सब को गृहस्थाश्रम में ही वैराग्य हुआ है। तथा जितने बड़े बड़े बड़े संन्यासी भी हुए हैं, उनको प्रथम गृहस्थाश्रम में ही वैराग्य हुआ है, अतएव गृहस्थाश्रम ही मोक्ष का द्वार है, इस से अर्थ, धर्म काम और मोक्ष चारों पदार्थ प्राप्त हो सकते हैं। गृहस्थाश्रमी कमल-पत्र वत् अनासक्त होकर रहे तो उसकी मुक्ति में कोई सन्देह नहीं है।

जिस काल में व्यास जी ने शुकदेव जी को राजा जनक के पास उपदेश लेने को भेजा है, उस समय शुकदेव जी ने राजा जनक के द्वार पर जाकर अपने आगमन की सूचना राजा के पास भेजी, राजा जनक ने शुकदेव जी की परीक्षा के लिये कहला भेजा "अभी द्वार पर ठहरो" तीन दिन शुकदेव जी द्वार पर खड़े ही रहे परन्तु उन को क्रोध तनिक भी न आया तब राजा जनक ने चौथे दिन शुकदेव जी को भीतर महल में बुलाया जब शुकदेव जी भीतर गये, तब देखा कि राजा जनक स्वर्ण के सिंहासन पर विराजमान हैं, सुन्दर युवतियां चरण दबा रही हैं। अनेक प्रकार के राग भोग के सामान सामने उपस्थित हैं, राजा जनक की विभूति को देख कर शुकदेवजी के मन में घृणा उत्पन्न हो गई, मन में विचारा कि यह राजा तो भोगों में आसक्त है, यह ज्ञानी कैसा। मेरे पिता जी ने इनके पास उपदेश लेने का क्यों भेजा, ? जनक जी शुकदेवजी के चित्त की बात जान गये। तब जनक जी ने एक ऐसी माया रची कि सम्पूर्ण मिथलापुरी में आग लग गई, राज दूतों ने दौड़े आकर तुरन्त राजा जनक को खबर दी कि महाराज! सम्पूर्ण शहर आग से जल रहा है, आग राज महलों तक आ गई थोड़ी ही देर में महलों के अन्दर भी आ जायगी, तब शुकदेवजी को फुरना हो गई कि बाहर द्वार पर हमारा भी तो दण्ड-कमण्डल रक्खा है, वह जल जायगा, जनक जी शुकदेव जी की चित्त की फुरना जान गये और बोले—

प्रार्थना ।

(महात्मा गाँधी)

करोड़ों हिन्दू मुसलमान, ईसाई, यहूदी और दूसरे लोग रोजाना अपने सृष्टा को भक्ति करने के लिए निश्चित किये हुए समय में क्या करते हैं। मुझे तो यह मालूम होता है कि वह सृष्टा के साथ एक होने को हृदय की उत्कटेच्छा का प्रगट करते हैं। और उसके आशीर्वाद के लिए याचना करते हैं। इसमें मनकी वृत्ति और भावों को ही महत्व होता है। शब्दों को नहीं। अक्सर पुराने जमाने से जो शब्द रचना चली आती है, उसका भी असर होता है। जो मातृ-भाषा में अनुवाद करने पर सर्वथा नष्ट हो जाता है। गुजराती में गायत्री का अनुवाद करके उसका वह असर न होगा जो कि असल गायत्री में होता है। राम शब्द के उच्चारण करने से लाखों करोड़ों हिन्दुओं पर फौरन असर होगा। और "गाड" शब्द का अर्थ समझने पर भी उसका उन पर कोई असर न होगा। चिरकाल के उपयोग के साथ संयोजित पवित्रता से शब्दों की शक्ति प्राप्त होती है। इसलिये सबसे अधिक प्रचलित मन्त्र और श्लोकों को संस्कृत भाषा रखने के लिये बहुत सी दलीलें की जा सकती हैं। परन्तु उनका अर्थ अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। यह बात तो बिना कहे ही मान ली जानी चाहिये। ऐसी भक्ति युक्त क्रियाएं किस समय करनी चाहिए। इसका कोई निश्चित नियम नहीं हो सकता है। इसका आधार जुदी जुदी व्यक्तियों के स्वभाव पर होता है। मनुष्य के जीवन में ये क्षण हो कीमती होते हैं। ये क्रियाएं हमें नम्र और शान्त बनाने के लिए होती हैं। और उससे हम इस बात का अनुभव कर सकते हैं। उसकी इच्छा के बिना कुछ भी नहीं हो सकता है। और हम तो "उस प्रजापति के हाथ में मिट्टी के पिंड हैं" ये पलें ऐसी हैं कि इस में मनुष्य अपने भूतकाल का निरीक्षण कर सकता है और अपनी दुर्बलता को स्वीकार करता है और क्षमा याचना करते हुए अच्छा कार्य करने की शक्ति के लिये प्रार्थना करता हैं। कुछ लोगों को इसके लिये एक मिनट भी बस होता है। तो कुछ लोगों को २४ घण्टे भी काफी नहीं हो सकते हैं। उन लोगों के लिए जो ईश्वर के अस्तित्व को अपने में अनुभव कर हैं। केवल मेहनत और मजदूरी करना भी प्रार्थना हो सकती है। उनका जीवन ही सतत प्रार्थना और भक्ति के कार्यों से बना होता है। परन्तु वे लोग जो पाप कर्म ही करते रहते हैं प्रार्थना में जितना भी समय लगायेंगे उतना ही कम होगा। यदि उनमें धैर्य और श्रद्धा होगी। और पवित्र बनने की इच्छा होगी। वे तब तक प्रार्थना करेंगे जब तक कि उन्हें अपने में ईश्वर की पवित्र उपस्थिति का निश्चयात्मक अनुभव न होगा।

अनन्तवत्तु मे वित्त' यन्मे नास्ति हि किञ्चन।
मिथिलायां प्रदग्धायां न मे दह्यति किञ्चन॥

अर्थात् मेरा जो आत्मा रूपी वित्त (धन) है जो अनन्त है, जो कदापि नष्ट नहीं हो सकता इस मिथिलापुरी के दग्ध होने होने से मेरा तो किञ्चित भी दग्ध नहीं होया है।

इस वाक्य में जनक जी ने सारे सुख भोगों में अपनी अनाशक्ति दिखलाई। तब शुकदेवजी को पूर्ण विश्वास हो गया कि राजा जनक सच्चे ब्रह्मज्ञानी हैं, (वाचक ज्ञानी नहीं है, जैसे कि आजकल बहुत देखने में आते हैं।)

प्रसन्नता और कुकर्म ये दो देश हैं। एक मनुष्य एक दम दोनों देशों में कैसे रह सकता है जो मनुष्य सुख चाहते हैं। वे-कुकर्मों को अवश्य ही छोड़ देंगे।

वैदिक कथाओं का रहस्य

(ले०—श्री पं० छज्जूराम शास्त्री विद्यासागर)

ब्रह्मा का अपनी पुत्री के साथ बलात्कार करना, इसके लिये उसका आकाश तक पीछा करना, वेदों में प्रसिद्ध है। देवराज इन्द्र का अहिल्या का सतीत्व नष्ट करना, भी एक वैदिक कथा है। हम यहाँ इन्हीं दोनों कथाओं का, कुमारिल के अनुसार, सत्यार्थ बतलाते हैं।

ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है:—'प्रजापतिर्वैस्वां दुहितरमभ्यध्यायत्' ब्रह्माजी ने अपनी पुत्री के साथ बलात्कार करने के लिये पीछा किया। ऋक्संहिता के ५, २, १३, तथा १, ५, १३ में भी ब्रह्मा के उक्त 'सुतानुगमन' का वर्णन है। ऐतरेय ब्राह्मण में पूर्वोक्त स्थान पर यह भी वर्णन मिलता है कि ब्रह्माजीने जब अपनी पुत्री का पीछा किया तब वह रागान्ध होकर लाल हो गई लज्जावश आकाश में भागी। ब्रह्माजी ने भी मृग हो कर उसका पीछा नहीं छोड़ा। यह कथा पुराणों में और भी अधिक सरस भाषा में लिखी गई है। स्तोत्रों में भी इस कथा का भक्ति के साथ उल्लेख किया गया है। महिम्नः स्तोत्र के कर्ता पुष्पदन्त ने वाराहपुराण के आधार पर यहभी जोड़ दिया है, कि जब ब्रह्माजीकी यह अनीत शंकर जी से नहीं देखी गई, तब उन्होंने एक शिकारीका रूप धारण कर उस मृग रूपी ब्रह्मा का अनुसरण किया। कुमारिल ने ब्रह्मा के इस कलङ्क का आश्वलायन सूत्र की टीका में तथा वार्तिक में भी युक्ति युक्त अर्थ करके परिमार्जन किया है। वे लिखते हैं:—

"सूर्य मण्डल अपने प्रकाश और उष्णता द्वारा प्रजाओं का पालन करता है। अतः सूर्य ही प्रजापति है। अरुणोदय बेला में वह उषा (उषःकाल) के पीछे ही आता देख पड़ता है। उषा-बेला ही उसकी पुत्री है। क्योंकि सूर्य के आने से ही वह उत्पन्न होती है। उसमें वह अपने अरुण किरण रूप बीज का निक्षेप करता है। इसलिये सूर्य के आने से उषःकाल के साथ कवियों ने स्त्री पुरुष व्यवहार का औपचारिक रूपेण अतिशयोक्ति रूपेण वर्णन किया है।

इन्द्र अहिल्या का जार कैसे है, इसका भी रहस्य सुनिये। ऋक्संहिता के 'उदीरय पित राजा' रमाभग ७,६,१० वें मन्त्र में इन्द्र को अहिल्या का जार कहा गया है। तैतरेयारण्यक १-१२ में इसी जार पद को लेकर अनेक विशेषणों के साथ इन्द्र को सम्बोधन किया गया है—यथा "गौरास्कन्दिन्" अहिल्यायै जार, कौशिक ब्राह्मण, गौतमब्रुवाण," इत्यादि। आगे बाल्मीकिजी ने इस कथा का जैसा सुमनोहर विस्तृत वर्णन किया है वह पाठकों को ज्ञात ही है। इन कथाओं को आलङ्कारिक रहस्य का समझना अत्यन्त कठिन होने से आज बहुत से अल्पज्ञ लोग वैदिक धर्म पर टीका-टिप्पणी करने लगते हैं और भ्रम में पड़ जाते हैं। जो देवराज है, यज्ञांश का प्रथम भागी है, उसकी यह घृणित पर स्त्री लम्पटता को देख कर किस श्रद्धालु, का हृदय दुविधामें न पड़ जायगा? हमको कुमारिल जैसे पारगामी विद्वान् हरदम कहाँ मिल सकते हैं? कुमारिल ने बड़ी खूबी के साथ इसके आलङ्कारिक पर्दे को हटाया है वे लिखते हैं:—अहिल्या नाम रात्रिका है। उसका जार सूर्य है। सूर्य को भी इन्द्र कहते हैं। जो महान् तेजस्वी तथा परमैश्वर्यशाली हो उन को इन्द्र कह सकते हैं। 'अहनि लीयते इत्य-अहल्या' इस निरुक्ति से दिन के प्रकाश में जो लीन हो उसका नामहै अहिल्या। रात्रि, प्रकाश होते ही दिन में लीन हो जाती है। इसलिये रात्रि ही अहिल्या है। उसका सूर्य द्वारा जारण क्षय होता है। अतः सूर्य उसका जार है। पर स्त्री-व्यभिचार से नहीं, कितना स्पष्ट तथा युक्ति युक्त अर्थ है।

जीवन को श्रेष्ठ बनाने में श्रेष्ठ शिक्षा की जरूरत केवल शुद्धाचरणों तथा पवित्र भावों की है। हर-एक बुरे विचार तुम्हारे इसी जीवन को नहीं बल्कि भावी जीवन को भी गिरा देते हैं।

चरित्रवान चाहिये

थियोडर पारकर कहा करते थे कि सुकरात की कीमत दक्षिण कोरोलिना की रियासतों से बहुत अधिक है। यदि तुम सोच सकते हो तो बिना मूसा के मिश्र की, बिना डेनियल के बेबोलीन की और डेमास्थनीज, फीडीयस, सुकरात या प्लेटो रहित ऐथेन्स की कल्पना करो वे वीरान दिखाई पड़ेंगे। ईसा के दो सौ वर्ष पूर्व कारथेज क्या था? बिना सीजर, सिसरो और मारकस आरेलियर के रोम क्या था? नेपोलियन, ह्यूगो, और हाईसिन्थ बिना पैरिस क्या है? बर्क, ग्लैडस्टन, पिट मिल्टन और सेक्सपियर बिना इङ्गलेण्ड क्याहै? बिना राम, बुद्ध, दयानन्द और गांधीके भारत में क्या बचता है?

हावेज कहता है-'चरित्रबल एक शक्ति है एक प्रतिभा है। वह मित्र और सहायक उत्पन्न कर सकती है और सुख सम्पत्ति का सच्चा मार्ग खोल सकती है।' संसार को ऐसे व्यक्तियों की बड़ी आवश्यकता है जिनमें ईमानदारी कूट-कूट कर भरी हो, जो पैसे के लिये अपनी बुद्धि न बेचें, जो सत्य के लिये स्वर्ग से सुख को ठोकर मारदें और जो धर्म के लिये मृत्यु के मुख में अपनी गरदन डालदें।'वालटेयर कहता है—पैसे से कोई बड़ा नहीं बनता, महापुरुष वह है जिसका आचरण श्रेष्ठ है। एक नीतिकार का मत है-मनुष्य का महत्व उसकी विद्या, बुद्धि ताकत या सम्पत्ति में नहीं है, उसका बड़प्पन ईमानदारी और परोपकार में है। एक तत्वज्ञ का कथन है-जिसने अपने मस्तक पर कलंक का टीका नहीं लगाया और जिसकी गरदन किसी के सामने शर्म से नहीं झुकती वही सच्चा बहादुर है।'

चौदहवें लुई ने अपने मन्त्री कालवर्ट से पूछा हमारा देश इतना बड़ा है और धन जन की हमारे पास कमी नहीं है फिर भी एक छोटे से देश हालेण्ड को हम क्यों नहीं जीत सके? मंत्री ने उत्तर दिया दिया-श्रीमान, किसी देश की महानता उसकी लम्बाई चौड़ाई पर नहीं, वरन् वहाँ के निवासियों के चरित्र पर निर्भर है।

जब टर्की ने कोसूथ को इस शर्त पर अपने यहाँ आश्रय देना स्वीकार किया कि वह इस्लाम धर्म स्वीकार करले। तो उस बहादुर ने कहा-"मृत्यु और शर्म का जीवन इन दोनोंमें से मैं पहली को पसन्द करूँगा। ईश्वर की इच्छा पूरी होने दो। मैं मरने को तैयार हूँ। मेरे यह हाथ खाली हैं परन्तु इन पर कलंक की कालिमा नहीं पुती है।" चाहे मनुष्य अशिक्षित हो, अयोग्य हो, गरीब हो या हीन कुल का हो फिर भी यदि उसमें सचाई और ईमानदारी है तो वह अपने लिये उच्च स्थान प्राप्त करेगा।

इमरसन कहते हैं—'चोरी करने से किसी के महल खड़े नहीं होते, दान करने से कोई दरिद्री नहीं होता। इसी प्रकार सत्य बोलने वाला न तो दु:खी रहता है और न ईमानदार भूखों मर जाता है।' महान् पुरुषों के चरित्र में यह एक विशेषता होनी है कि वे चारों ओर से तूफान उठने और आघात पड़ने पर ज़रा भी विचलित नहीं होते वरन् बज्र के समान सुदृढ़ बने रहते हैं। लिंकन वकील था। गरीबी से गुज़र करता था। पर उसने कभी झूठे मुकदमे की पैरवी नहीं की। मिश्र का प्राचीन कालीन एक राजा लिखता है-'मैंने किसी बालक या स्त्री को कष्ट नहीं दिया। किसी किसान के साथ असद्व्यवहार नहीं किया। मेरे राज्य में विधवा को यह मालूम नहीं होता था कि वह अनाथ हो गई है।' कितने आश्चर्य की बात है कि लोग इस बात को नहीं जानते कि दुनिया को उनकी योग्यता की अपेक्षा चरित्र अधिक पसंद है। उच्च आचरण के कारण ही लिंकन अमेरिका का राष्ट्रपति बना था।

भाग्यवान और अभागे

(ले०—ऋषि तिरुवल्लुवर)

कौन अभागा है और कौन भाग्यवान् है? इस की एक कसौटी मैं तुम्हें बताये देता हूँ। जो आदमी क्रियाशील है, उत्साही है, आशावान है वह भाग्यवान है। भाग्य लक्ष्मी उसके घर रास्ता पूछती २ खुद पहुँच जायगी। सुस्ती, निद्रा, आलस्य प्रमाद, भूल जाना, काम को टालना, यह लक्षण जिनमें हैं समझलो कि वह अभागे हैं उनके भाग्य की नौका अब तब डूबने ही वाली है। याद रखो आलस्य में दरिद्रता का और परिश्रम में लक्ष्मी का निवास है।

जिन्हें काम करने से प्रेम है वे सचमुच अमीर हैं। और निठल्ले? वे तो हाथ पाँव वाले मोहताज हैं। पैसा आज है कल चला जायगा परन्तु क्रियाशीलता वह पारस है जो हर मौके पर लोहे को सोना बना देगी। धन्य है वे मनुष्य जिन्हें काम करना प्रिय है, जो कर्त्तव्य में निरत रहकर ही आनन्द का अनुभव करते हैं। उत्साही पुरुष असफलता से विचलित नहीं होता। हाथी के शरीर में जब तीर घुसते हैं तो वह पीछे नहीं हटता वरन् और अधिक दृढ़ता के साथ अपने कदम जमाजमाकर चलता है। भाग्य साथ न दे और असफल होना पड़े तो इसमें कुछ भी लज्जा की बात नहीं है। शर्म की बात यह है कि मनुष्य अपने कर्त्तव्य की अवहेलना करे और आलस्य में बैठा रहे। अखण्ड उत्साह—बस, शक्ति का यही मूल स्रोत है। जिसमें उत्साह नहीं वह तो चलता फिरता पुतला मात्र है।

यदि मनुष्य सीखना चाहे, तो उसकी हर एक ग़लती कुछ न कुछ सिखा देती है।

* * * *

क्या ईसा मरगया? शिव, दधीचि या हरिश्चन्द्र का अस्तित्व मिट गया? क्या वाशिंगटन और अब्राहमलिंकन नहीं रहे? क्या बन्दा वैरागी और वीर हकीकत दुनियाँ में नहीं हैं? रोज हज़ारों आदमी मरते हैं उन्हें कोई जानता तक नहीं, किंतु श्रेष्ठ आचरण मनुष्य का सुनहला स्मारक खड़ा कर देता है जो युगों तक चमकता रहता है। ऐश्वर्य भोगी राजाओं की अपेक्षा, जङ्गल-जङ्गल खाक छानते फिरने वाले राणा प्रताप अधिक सुखी हैं। बैरिस्टर गांधी की अपेक्षा साधु गांधी का महत्व अधिक है।

पानी की एक बूंद यदि गरम लोहे पर पड़ जायगी, तो उसका नाम निशान भी न रहेगा। अगर वह केले के पत्र पर पड़ जायगी तो मोती के सदृश शोभा देगी। और वही स्वाँति के संयोग से सीप में गिर कर असली मोती बन जाती है। अतः जैसी संगति मिलती है वैसा ही असर आता है।

* * * *

जिसको तुम सत्कार्य समझते हो, उसको पूरा करके दिखाओ, इसमें यह न देखो, कि इसमें हमारी बुराई है अथवा प्रशंसा है। दूसरा कोई चाहे, कुछ समझता रहे।

* * * *

उच्च कोटि की उदारता हिम्मत ही है। अतः साहसी मनुष्य अपनी अमूल्य चीजों को भी मुक्त हस्त होकर खर्च कर देता है।

* * * *

ग्रन्थों के प्रेमी मनुष्य को दयालु, हितैषी, उपदेशक, विनोदी साथियों की कमी न रहेगी।

* * * *

साक्षात् पीयूषरस संसार का प्रेम-व्यवहार ही है। जिसे दो, वही पक्ष लेने लगता है।

* * * *

मूर्खों का ही व्यापार लड़ाई करना है।

* * * *

म बातों का जानना

हमारा ज्ञान बहुत सीमित है। केवल सुनी
ी हुई और अनुभव में आई हुई बातों की ही
नकारी हमें होती है, परन्तु संसार में और भी
ी अनेक जानने योग्य बातें मौजूद हैं, जिन्हें
ूल इन्द्रियों की सहायता से नहीं जाना जा सकता
श्व में बहुत सारा ज्ञान छिपा पड़ा है, जिनमें
मर्थ है वे उसे अनायास ही जान लेते हैं,
ौर लाभ उठाते हैं। सभी ज्योतिषी, भविष्य वक्ता,
ञ प्रश्न बताने वाले, मनकी बात जानने वाले
ौर भूत भविष्य की जानकारी रखने वाले झूठे
दम्भी होते हों, सो बात नहीं है, इनमें से कितनों
में बड़ी विचित्र सामर्थ्य होती है, और वे
पने ज्ञान से बड़ा आश्चर्य उत्पन्न कर देते हैं।

जिस अवस्था में दिव्य ज्ञान का अनुभव होता
उसे समाधि अथवा क्लेरोवायन्स कहते हैं।
लेरो वायन्स का तात्पर्य है स्पष्ट देखना। धुँधली
न्द्रियाँ जिस बात को नहीं देख पातीं उन्हें जानने
ग्य सूक्ष्म इन्द्रियों को यदि जागृत कर लिया जाय
यह अवस्था प्राप्त हो सकती है। वाह्य मस्तिष्क
ी घुड़ दौड़, तर्क श्रृङ्खला, और अस्थिरता एवं
ांसारिक झञ्झटों का बहुत अधिक दवाब जब मन
ऊपर पड़ता है, तो वह धुँधला होजाता है किन्तु
दि हम अन्तर्मुखी होने का अभ्यास करें, बाहरी
ंझटों की अपेक्षा आत्म साधना में अधिक मन
गावें, तो हम समाधि अवस्था के निकट होते
ा सकते हैं।

योग की वह समाधि जिसमें रक्त का संचालन
ौर श्वास प्रश्वास क्रिया बन्द होजाने पर भी
नुष्य जीवित रहता है, यहाँ उस अवस्था का
ल्लेख नहीं किया जा रहा है क्यों कि वह बहुत ही
ँची चीज है; और साधना में पारंगत साधुओं
ो छोड़ कर साधारण लोगों के लिये संभव नहीं है,
ोटी श्रेणी की समाधि साधारण लोगों को भी प्राप्त
जाती है, और उसके लिये संज्ञाहीन होने की कोई
आवश्यकता नहीं है। हठ योग की पुस्तकों में
समाधि की सात कक्षाएं बताई हैं। उनकी कुछ
आरंभिक कक्षाएं थोड़ा सा अभ्यास करने पर कई
साधकों को प्राप्त होजाती हैं। कितने ही उदाहरण
ऐसे देखे जाते हैं, जिनमें अशिक्षित, असभ्य, और
अज्ञानी मनुष्यों में यह सामर्थ्य जागृत होती हैं, और
वे गुप्त बातों को आश्चर्यजनक रीति से बताते हैं।

मानवीय विद्युत तेज (औरा) विचार कम्पनों
का प्रवाह, अन्य मनुष्य के मन का अनुभव, छिपी
हुई वस्तुओं का ज्ञान, किसी वस्तु की पूर्व परंपरा,
भावी घटनाओं का पूर्वाभास आदि का अनुभव यह
उसी मनुष्य को प्रगट होंगी, जिसे पूर्व संस्कारों
के आधार पर अथवा आधुनिक अभ्यास के द्वारा
समाधि की कुछ स्थिति प्राप्त होते होगी। यह स्थिति
जितनी धुँधली होगी, उतने ही अस्पष्ट अनुभव
आवेंगे, और जितनी साफ होती जायगी उतना ही
स्वच्छ ज्ञान होगा।

यह योग्यता मनुष्य को स्वभावतः प्राप्त है,
उसको कहीं बाहर से प्राप्त नहीं करना है, केवल
उसके ऊपर जमे हुए मैल को हटाना है। इसलिये
क्लेरोवायन्स के अभ्यास के लिये किसी कठिन
अभ्यास की जरूरत नहीं है। अन्तर्मुखी होना,
आत्म चिन्तन में समय लगाना। ईश्वराराधन, पूजा,
पाठ, जप तप करना इनमें से अपने विश्वास के
आधार पर जो कुछ भी अभ्यास सच्चे हृदय से
और निष्ठापूर्वक किया जाय, वही इस मार्ग को
खोलने में सहायक हो सकता है। चित्त की
स्थिरता और हृदय की पवित्रता यह दो गुण इस
दिशा में बहुत ही उत्तम सिद्ध होते हैं। दुर्गुणी और
दुष्ट प्रकृति के लोग त्रिकाल मे भी इस अवस्था को
प्राप्त नहीं कर सकते।

कुछ हठ योगी इसलिए गाँजा, भाँग चरस,
शराब आदि पीते हैं कि उनकी वाह्य चेतना निद्रित
होजाय और समाधि का आनन्द आने लगे। किन्तु
भ्रम में उलझे रहने के अतिरिक्त उन्हें कुछ वास्तविक
लाभ नहीं होता। वाह्य चेतना निद्रित कर लेना
तब तक व्यर्थ है, जब तक कि आन्तरिक चेतना

जागृत न हो, नशीली चीजों से आन्तरिक तत्वों का जागृत होना तो दूर रहा, उलटे वह जड़ता को प्राप्त हो जाते हैं, इसलिये साधकों को इस दृष्टि से मादक द्रव्यों का सेवन कदापि न करना चाहिये।

वाह्य चेतना को निद्रित करने का अच्छा मार्ग चित्त की एकाग्रता और आन्तरिक शान्ति ही हो सकती है। इसी के द्वारा सूक्ष्म इन्द्रियों का जागरण सम्भव है। जो इस विषय का अभ्यास करना चाहते हों उन्हें उचित है कि अपनी कोई प्रिय वस्तु चुन लें और बहुत समय तक उसी पर ध्यान जमाने का अभ्यास करें। जैसे आप को अपनी हीरे की अँगूठी प्रिय है, तो उसे सामने रख कर मन उस पर जमाइए और उसी के सम्बन्ध मे चिन्तन कीजिए। दस पाँच मिनट प्रतिदिन इसका अभ्यास करने से अँगूठी और हीरे के सम्बन्ध में बहुत ही सूक्ष्म बातें ध्यान में आने लगेंगी। निरन्तर छै सप्ताह के अभ्यास से बहुत लाभ होगा।

आरम्भिक अभ्यास किसी जड़ वस्तु पर से किया जा सकता है। छै सप्ताह बाद मानसिक ध्यान करना चाहिये, अपने इष्ट देव की मूर्ति का मानसिक ध्यान करने और उनके अङ्ग-प्रत्यङ्गों को स्पष्ट देखने का अभ्यास करने से सूक्ष्म चेतना बहुत साफ होती जाती है और धीरे-धीरे अप्रत्यक्ष बातों की जानकारी बढ़ने लगती है। क्लेरो वायेन्स के लिये गाँजे का नशा नहीं आत्म साधना का नशा होना चाहिये। साँसारिक कार्य करते हुए भी यदि संसार से भूले रहें और आध्यात्मिक लोक में भ्रमण करने का अभ्यास डालें, तो यह दिव्य शक्ति हमें धीरे-धीरे प्राप्त हो सकती है।

दूसरों के मन की बात जानने में, स्वभाव जानने में, इतिहास जानने में अपनी आरम्भिक योग्यता की परीक्षा शुरू करनी चाहिए। पहले यदि एक चौथाई बातें ठीक निकलें तो हताश नहीं प्रसन्न होना चाहिए। जैसे जैसे अभ्यास बढ़ता जायगा, तिहाई, आधो, पौना बातें ठीक आने लगेंगी। एक दिन ऐसी अवस्था भी प्राप्त हो सकती है, जब विश्व की कोई बात गुप्त न रहेगी और प्रत्यक्ष पदार्थों की भाँति गुप्त पदार्थ स्पष्ट दिखाई देने लगेंगे।

सद् व्यवहार

(ले०—सन्त कबीर)

कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय।
आप ठग्या सुख ऊपजै, और ठग्यां दुख होय॥
जा घर साध न सेवयहि, हरि की सेवा नाहिं।
ते घर मरघट सारखे, भूत बसहिं तिन माहिं॥
कबीर मन निर्मल भया, जैसे गंगा नीर।
पीछे लागो हरि फिरत, कहत कबीर, कबीर॥
जहाँ ज्ञान तहाँ धर्म है, जहाँ झूठ तहाँ पाप।
जहाँ लोभ तहँ काल है, जहाँ क्षमा तहँ आप॥
शूर सोइ पहचानिये, लरै दीन के हेत।
पुरजा पुरजा कटि मरै, कबहुँ न छाँड़ै खेत॥
सन्त न बाँधै गाठड़ी, पेट समाता लेइ।
साँई सूँ सन्मुख रहे, जहँ माँगे तहँ देइ॥
माँगन मरण समान है, बिरला बंचै कोइ।
कहै कबीर रघुनाथ सूँ, मतिर मंगावे मोइ॥
गावन में रोवन अहै, रोवन ही में राग।
एक वैरागी ग्रही में, एक गृहीं में वैराग॥
कबीर संगत साध की, कभी न निष्फल होय।
चन्दन होसी बावना, नींव न कहसी कोय॥
कबीर बन बन में फिरा, कारण अपने राम।
राम सरीखे जन मिले, तिन सारे सब काम॥
कबीर चन्दन का बिरे, बैठो आक पलास।
आप सरीखे करि लिये, जे बैठे उन पास॥
कबीर खाई कोट की, पानी पिवै न कोइ।
जाय मिलै जब गंग में, सब गंगोदक होइ॥
मारी मरूँ कुसंग की, केला काटे बेरि।
वह हालै वह चीरिये, साखित संग न फेरि॥
ऊँचे कुल क्या जन्मिया, जो करनी ऊँच न होय।
सुवरण कलश सुरा भरी, साधू निंदै सोय॥
कबीर तन पंखी भया, जहँ मन तहँ उड़ि जाय।
जो जैसी संगति करै, सो तैसे फल खाय॥

क्या कर्म क्या अकर्म?

(स्व० स्वामी विवेकानन्द जी महाराज)

जो बात एक देश में नीत की समझी जाती है, वही बात दूसरे देश में नीति की बिलकुल विघातक समझी जाती है। कुछ देशों में चचेरी बहिन से विवाह करना साधारण व्यवहार की बात है, किन्तु अन्य कई देशों में यही चाल नीति के बिलकुल विरुद्ध मानी जाती है। कई देशों में साली से विवाह करना पाप समझते हैं, कई में उसे ऐसा नहीं समझते। कई देशों में एक पुरुष के एक समय में एक ही पत्नी होना नीति की बात मानी जाती है– परन्तु दूसरे कई देशों में एक ही समय में चार पांच अथवा सौ पचास स्त्रियों का होना भी एक साधारण चाल है। इसी प्रकार नीति के अन्य सिद्धान्तों का भी अव्यवहार्य रूप प्रत्येक देश में भिन्न-भिन्न पाया जाता है,

कर्त्तव्य का भी यही हाल है। कई जगह ऐसा समझा जाता है कि मनुष्य यदि कोई एक काम नहीं करता तो वह कर्तव्यच्युत हो जाता है। परन्तु अन्य देशों में वही कार्य करने वाला मूर्ख समझा जाता है। यद्यपि वास्तविक दशा ऐसी है, तथापि हम लोग सदैव यही समझते हैं कि साधारणतया नीति और कर्तव्य के विचार सम्पूर्ण मानव जाति में एक ही हैं। अब हमारे सामने प्रश्न खड़ा होता है, कि हम अपनी उपर्युक्त समझ और उपर्युक्त बातों के व्यवहार्थ स्वरूप की भिन्नता के अनुभव का मेल कैसे मिलावें। बस परस्पर विरोधी अनुभवों की एक वाक्यता करने के लिये दो मार्ग खुले हुए हैं। एक मार्ग यह है कि यह समझा जाय कि "मैं जो कुछ कहता अथवा करता हूँ वही ठीक है और वैसा न करने वाले अन्य लोग मूर्ख तथा अनीतिवान हैं।" परंतु यह मार्ग मूर्खों का है। चतुरों का मार्ग इससे भिन्न है। वे कहते हैं कि भिन्न-भिन्न देश काल और भिन्न-भिन्न परिस्थियों के कारण एक ही सिद्धान्त के व्यवहार में भेद दिखाई देते हैं। परन्तु वास्तव में यह बाहर से दीख पड़ने वाले भेद भाव सच्चे नहीं हैं। इस सिद्धान्त की निरर्थकता न दिखला कर केवल परिस्थिति की भिन्नता मात्र दिखलाते हैं। पंडितों का मत यह है, कि सिद्धान्त चाहे एक ही हो तो भी उसका व्यावहारिक स्वरूप परिस्थिति के अनुसार बदलना संभव है, न सिर्फ संभव है वरन् आवश्यक भी है।

सत्य नारायण का व्रत

(पं० शिवनारायनजी शर्मा हैडमास्टर आगरा)

सत्य की साधना में प्रवृत्त होते ही अनेक प्रलोभन और विघ्न आपको सत्य मार्ग से डिगाने की चेष्टा करेंगे। कभी ऐसा भी देखोगे कि मिथ्या का आश्रय का लेने से ही आप धन, ऐश्वर्य, यश,गौरव आदि पार्थिव सुख भोग की वस्तुऐं अनायास प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु उस दशा में ऐसे प्रलोभन के हाथ से बचने की चेष्टा करो। मिथ्या का आश्रय लेकर समस्त पृथ्वी का आधिपत्य भी मिले तो उसे तुच्छ समझो। सत्य-धर्म के आश्रय में रह कर यदि सदा दरिद्री रहना पड़े, भिक्षा से निर्वाह करना पड़े, लाञ्छित होना पड़े, चाहे मृत्यु भी हो जाय तो उसे सहस्र-गुणा श्रेय समझो, ऐसा मनोबल लाने की चेष्टा करो।

यदि तुम देखो कि असत्य के प्रलोभन से तुम्हारा चित्त दुर्बल होगया है तो काय-मनो-वाक्य से दुर्बल के बल भगवान् के चरणों में मैं सर्वतो भाव से शरणागत हो जाओ। "प्रभो! हमें बल दीजिये, हमारा मन मिथ्या के जाल पर मुग्ध होना चाहता है। जानते हैं कि यह मिथ्या है, असत्य है, इसका परिणाम बुरा है;तथापि दुर्बल मन किसी प्रकार मिथ्या का प्रलोभन त्याग नहीं सकता। इस मिथ्या प्रलोभन से हमारी रक्षा कीजिये। ऐसी प्रार्थना करने से भगवान् निश्चय ही रक्षा करेंगे; और यदि उनकी शरण लेने पर अनेक बार सफलता न भी हो तो भी हताश न हूजिये; भगवान् को दोष न दीजिये बल्कि कहिये कि यथार्थ रूप से हम प्रार्थना नहीं कर सके हैं, इस कारण सफलता नहीं हुई। याद रखिये कि बार-बार की अकृतकार्यता ही अभीष्ट-सिद्धि का पूर्व लक्षण है।

योगी के लिये सब कुछ संभव है।

(महोमहापाध्याय आचार्य पं० गोपीनाथ जी कविराज एम० ए)

बहुत दिनों पहले की बात है जिस दिन महा पुरुष परमहंस विशुद्धानंद जी महाराज का पता लगा था, तब उनके संबंध में बहुत सी अलौकिक शक्ति की बातें सुनी थीं। बातें इतनी असारण थीं कि उन पर सहसा कोई भी विश्वास नहीं कर सकता। अवश्य ही 'अचिन्त्य महिमान: खलु योगिन:' इस शास्त्र वाक्य पर मैं विश्वास करता था और देश विदेश के प्राचीन एवं नवीन युगों में विभिन्न सम्प्रदायों के जिन विभूति सम्पन्न योगी और सिद्ध महात्माओं की कथाएं ग्रन्थों में पढ़ता था, उनके जीवन में संघटित अनेकों अलौकिक घटनाओं पर भी मेरा विश्वास था। तथापि, आज भी हम लोगों के बीच में ऐसे कोई योगी महात्मा विद्यमान हैं, यह बात प्रत्यक्षदर्शी के मुख से सुनकर भी ठीक ठीक हृदयंगम नहीं कर पाता था। इसीलिये एक दिन सन्देह नाश तथा औत्सुक्य की निवृत्ति के लिये महापुरुष के दर्शनार्थ मैं गया।

उस समय सन्ध्या समीप प्राय थी, सूर्यास्त में कुछ ही काल अवशिष्ट था! मैंने जाकर देखा, बहु संख्यक भक्तों और दर्शकों से घिरे हुए एक पृथक आसन पर एक सौम्यमूर्ति महापुरुष व्याघ्र-चर्म पर विराजमान हैं। उनके सुन्दर लम्बी डाढ़ी है, चमकते हुए विशाल नेत्र हैं, पकी हुई उम्र है, गले में सफेद जनेऊ है, शरीर पर कषाय वस्त्र है, और चरणों में भक्तों के चढ़ाये हुए पुष्प और पुष्प मालाओं के ढेर लगे हैं। पास ही एक स्वच्छ काश्मीरोपल से बना हुआ गोल यन्त्र विशेष पड़ा है। महात्मा उस समय योगविद्या और प्राचीन आर्ष विज्ञान के गूढ़तम रहस्यों को, उपदेशक के बहाने साधारण रूप में व्याख्या कर रहे थे। कुछ समय तक उनका उपदेश सुनने पर जान पड़ा कि इसमें अनन्य साधारण विशेषता है। क्यों कि उनकी प्रत्येक बात पर इतना जोर था, मानों वे अपनी अनुभव सिद्ध बात कह रहे हैं, केवल शास्त्र वचनों की आवृत्ति मात्र नहीं है। वे समझा रहे थे कि जगत् में सर्वत्र ही सत्ता मात्र रूप से, सूक्ष्म भाव से, सभी पदार्थ विद्यमान रहते हैं। परन्तु जिनकी मात्रा अधिक प्रस्फुरित होती है, वही अभिव्यक्त और इन्द्रियगोचर होता है, जिसका ऐसा नहीं होता वह अभिव्यक्त नहीं होता—नहीं हो सकता। लोहे का टुकड़ा केवल लोहा ही है, सो नहीं है, उसमें सारी प्रकृति अव्यक्त रूप से निहित है, परंतु लोहा भाव की प्रधानता से अन्यान्य समस्त भाव उसमें विलीन होकर अदृश्य हो रहे हैं। किसी भी विलीन भाव को (जैसे सोना) प्रबुद्ध करके उसकी मात्रा बढ़ा दी जावे तो पूर्व भाव स्वभावतः ही अव्यक्त हो जायगा, और वह सुवर्णादि प्रबुद्ध भाव प्रबल होने से वह वस्तु फिर उसी नाम और रूप से परिचित होगी।

कुछ देर तक जिज्ञासु रूप से मेरे पूछ ताछ करने पर उन्होंने मुझ से कहा—'तुम्हें यह करके दिखाता हूं।' इतना कह कर उन्होंने आसन पर से एक गुलाब का फूल हाथ में लेकर मुझसे पूछा-बोलो इसको किस रूप में बदल दिया जाय? वहाँ जवा फूल नहीं था। इसी से मैंने उसको जवा फूल बना देने के लिये उनसे कहा। उन्होंने मेरी बात स्वीकार करली और बाएं हाथ में गुलाब का फूल लेकर दाहिने हाथ से उस स्फटिक यन्त्र के द्वारा उस पर विकीर्ण सूर्य रश्मिको संहत करने लगे। क्रमशः मैंने देखा, उसमें एक स्थूल परिवर्तन हो रहा है। पहले एक लाल आभा प्रस्फुटित हुई-धीरे धीरे तमाम गुलाब के फूल विलीन होकर अव्यक्त होगया, और उसकी जगह एक ताजा हलका खिला हुआ झूमका

जबा प्रकट हो गया । उस फूल को मैं यह जानने के लिये घर ले गया कि कहीं मैं सम्मोहिनी विद्या (मेस्मरेजम) के वशीभूत होकर हीं जबा फूल की कोई सत्ता न होने पर भी जबा फूल तो नहीं देख रहा हूँ। इस फूल को मैंने बहुत दिनों अपनी पेटी में रखा वह सूखने पर भी जबा पुष्प ही रहा ।

स्वामी जी ने कहा—'इसी प्रकार समस्त जगत् में प्रकृति का खेल हो रहा है, जो इस खेल के तत्व को कुछ समझते हैं—वही ज्ञानी हैं । अज्ञानी इस खेल से मोहित होकर आत्म विस्मृत हो जाता है । योग के बिना इस ज्ञान या विज्ञान की प्राप्ति नहीं होती । इसी प्रकार विज्ञान के बिना वास्तविक योग पद पर आरोहण नहीं किया जा सकता ।

मैंने पूछा—तब तो योगी के लिये सभी कुछ संभव है ?' उन्होंने कहा—'निश्चय ही है, जो यथार्थ योगी हैं, उनकी सामर्थ्य की कोई इयत्ता नहीं है, क्या हो सकता है और क्या नहीं, इसकी कोई निर्दिष्ट सीमा-रेखा नहीं है । परमेश्वर ही तो आदर्श योगी हैं, उनके सिवा महा शक्ति का पूरा पता और किसी को प्राप्त नहीं है, जो निर्मल होकर परमेश्वर की शक्ति के साथ जितना युक्त हो सकते हैं, उनमें उतनी ही ऐसी शक्ति की स्फूर्ति होती है ।

मैंने पूछा—इस फूल का परिवर्तन अपने योग बल से किया था और किसी उपाय से ? स्वामीजी बोले—उपाय मात्र ही तो योग है, दो वस्तुओं को एकत्र करने को ही तो योग कहा जाता है । अवश्य ही यथार्थ योग इससे पृथक है । अभी मैंने यह पुष्प सूर्य विज्ञान द्वारा बनाया है । योग बल या शुद्धि इच्छा शक्ति से भी सृष्टि आदि सब कार्य हो सकते हैं, परन्तु इच्छा शक्ति का प्रयोग न करके विज्ञान कौशल से भी सृष्ट्यादि कार्य किये जा सकते हैं ।' मैंने पूछा—'सूर्य विज्ञान क्या है ?' उन्होंने कहा—सूर्य ही जगत् का प्रसविता है । जो पुरुष सूर्य की राशि अथवा वर्ण माला को भली भाँति पहिचान गया है और वर्णों को शोधित करके परस्पर मिश्रित करना सीख गया है, वह सहज ही सभी पदार्थों का संघटन या विघटन कर सकता है ।

मैंने पूछा—आप को यह विज्ञान कहां से मिला ? मैंने तो कहीं इसका नाम भी नहीं सुना ।' उन्होंने हँसकर कहा—तुम लोगों का ज्ञान ही कितना है ? यह विज्ञान भारत की ही वस्तु है । उच्चकोटि के ऋषिगण इसको जानते थे, और उपयुक्त क्षेत्र में इसका प्रयोग किया करते थे । अब भी इस विज्ञान के पारदर्शी आचार्य अवश्य ही वर्तमान हैं । वे हिमालय और तिब्बत में गुप्त रूप से रहते हैं । मैंने स्वयं तिब्बत के उपान्त मार्ग में ज्ञानभंड नामक बड़े भारी योगाश्रम में रहकर एक योगी और विज्ञानवित् महापुरुष से दीर्घकाल तक कठोर साधना करके इस विद्या को और ऐसी ही और भी अनेकों लुप्त विद्याओं को सीखा है । यह अत्यन्त ही जटिल और दुर्गम विषय है—इसका दायित्व भी अत्यन्त अधिक है । इसीलिये आचार्य गण सहसा किसी को यह विषय नहीं सिखाते ।'

मैंने पूछा—'क्या इस की और भी विद्याऐं हैं ? उन्होंने कहा—'हैं नहीं तो क्या !' चन्द्र विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, वायु विज्ञान, क्षण विज्ञान, शब्द विज्ञान, मनोविज्ञान इत्यादि बहुत विद्याऐं हैं । केवल नाम सुनकर ही तुम क्या समझोगे ? तुम लोगों ने शास्त्रों में जिन विद्याओं के नाम मात्र सुने हैं वे उनके अतिरिक्त और भी न मालूम कितना क्या है ?'

—कल्याण

यह एक दैवी कानून बाजारों चौरायों पर लिख देना चाहिये कि—ईश्वर की आँखों में मिर्चें पटकना स्वयं ही अन्धा बनना है ।"

× × × ×

बनास्पति घी चार आना सेर

(विद्यार्थीओ३म् प्रकाश शुक्ल, ऐत्मादपुर)

बनास्पति घी का बाजार में खूब प्रचार है। साधारण जनता इसे घासलेट के नाम से पुकारती हैं और समझती है कि किसी विलायती घास आदि का यह सत्व है। व्यापारी लोग इसकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। फल स्वरूप जनता भ्रम में पड़जाती है। बनास्पति घी और कुछ नहीं मामूली तेलों को दवाओं से रूपान्तर करके उसमें घी का इत्र मिला दिया जाता है। जिन दवाओं से तेलों का रूपान्तर किया जाता है, वे हानिकारक होती हैं, उनकी मिलावट से वे तेल और भी हानिकारक होजाते हैं। कभी कभी तो सस्ते मछली के तेल आदि से भी यह बनाया जाता है।

जो लोग नौ दस आने सेर इस बनास्पति घी को खरीदते हैं, वे शुद्ध तेल स्तैमाल करें तो सस्ता भी पड़ेगा और हानिकर भी न होगा। आगे कुछ ऐसे उपाय बताये जाते हैं जिनके द्वारा तेल भी घी की तरह सेकने या दाल साग में काम ला सकते हैं। तेल की जो गन्ध आती है वह न आवेगी।

(१) पाँच सेर असली सरसों का तेल लेकर उसमें पाव भर दही डालदो। कढ़ाई में आँच पर चढ़ा कर मंदी मंदी आँच से पकाओ जब दही जल कर काला पड़ कर तेल पर उतराने लगे तो ठंडा करके छानलो। काम में लाओ, कोई नहीं पहचान सकता कि पूड़ी या साग तेल में बना है, या घी में।

(२) सरसों का तेल सुदृढ़ मटके में भर कर मुँह पर कपड़ा मिट्टी लगा कर चौड़े मैदान में जमीन में गाढ़दो। बरसात भर गढ़ा रहने दो शरद ऋतु में निकाल कर काम में लाओ।

दैवी संपति

(श्री धर्मपालजी बरला)

यज्ञ (तन, मन, धन, लोकहित के लिये कार्य करना) तप (यज्ञ कर्म के लिये चित्त और इन्द्रियों को रोकना) दान, सत्संग, धार्मिक ग्रन्थों का पठन पाठन, महात्माओं के दर्शन करने की इच्छा रखना, मन में सदैव शुभ और पवित्र विचारों को उठाते रहना, अपने कर्त्तव्य को सचाई और ईमानदारी से करना, अनाथ, गरीब, अपाहिजों पर दया करना और उनकी सहायता करना, विद्यादान अतिथि सेवा और मन का प्रसन्न होना आदि सभी उत्तम कर्म ईश्वर प्राप्ति के साधन हैं। गीता के १६ वें अध्याय में भगवान् ने इन्हीं गुणों को विस्तार के साथ दैवी सम्पत्ति के नाम से कहा है और अर्जुन को बताया है कि दैवी सम्पत्ति से मोक्ष मिलती है।

भक्ति का अर्थ है सेवा। सर्वेश्वर सर्वाधार प्रभु सब प्रकार समर्थ और हमेशा तृप्त हैं, उन्हे किसी प्रकार की सेवा की आवश्यकता नहीं है। फिर उनकी सेवा का क्या मतलब और ढंग होना चाहिये ? वास्तव में मन, वाणी और कर्म से प्राणी मात्र की सेवा और विशेष रूप से मनुष्य जाति की सेवा करना ही भगवान की भक्ति है। भक्ति ही मुक्ति का मार्ग है। भक्त की सभी बुरी आदतों में इतनी शीघ्रता पूर्वक परिवर्तन होना शुरू हो जाता है, जिसे देखकर सब आश्चर्यचकित होजाते हैं। छल, कपट, स्वार्थ, ईर्षा आदि दोषों का नाश होकर उनके स्थान में सरलता, निष्कपटता, उदारता, प्रेम आदि शुभ गुण आने लगते हैं। इस प्रकार धीरे-धीरे अन्तःकरण पवित्र होने लगता है, जो एक मात्र प्रभु दर्शन का मन्दिर है।

सोना पाने का अधिकारी

(रश्किन की एक कहानी के आधार पर)
(श्री प्रेम नारायण शर्मा कानूनगो अम्बाह)

एक बार तीन व्यक्ति गरीबी से तंग आकर धन कमाने के लिये परदेश को रवाना हुए। बहुत दिनों तक वे इधर उधर भटकते रहे, किन्तु कोई ऐसा उपाय न मिला जो धन कमाते। हताश होकर वे कुबेर देवता को प्रसन्न करने के लिए तप करने लगे। उनको उग्र तपस्या से कुबेर देवता प्रसन्न हुए, और उनकी पात्रता के अनुसार फल देने के लिए एक साधु का वेश बना कर उन व्यक्तियों के पास पहुँचे।

साधु वेश धारी कुबेर ने उनसे पूछा कि तुम लोग क्यों तप कर रहे हो? उन्होंने कहा—धन के लिये। साधु ने कहा—अच्छा, बेटा! मैं तुम्हें एक ऐसा उपाय बताता हूँ जिससे तुम लोग मन चाहा धन प्राप्त कर सकते हो। सामने जो झरना बह रहा है, वह वरुण देवता का बना हुआ है। इसमें यदि गंगोत्री से लाकर थोड़ासा गंगा जल डाल दो तो इसका सारा पानी सोने का हो जायगा। यदि तुम लोग गंगोत्री गंगा जल ले आओ तो आसानी से मन चाहा सोना पा सकते हो।

वे तीनों व्यक्ति बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि गंगोत्री वहाँ से पास ही थी। शाम तक लौट कर वापिस आया जा सकता था। वे लोग अपने अपने घड़े लेकर गंगाजल लेने के लिए चल दिये। रास्ता न तो बहुत कठिन था और न दूर, कुछ ही घण्टों में वे लोग वहाँ पहुँच गये और घड़े भर भर कर वापिस लौटने लगे।

उनमें से दो के मन में यह विचार उठने लगे कि मैं पहले पहुँच जाऊँ और पहले अपना गंगा जल डाल दूं. इस प्रकार उस सारे झरने पर मेरा ही अधिकार हो जायगा। पहला और दूसरा दोनों ही गुप्त रूप से ऐसा सोच रहे थे, इसलिये उन्हें बहुत जल्दी थी—वे बहुत तेजी से चलने लगे। तीसरा व्यक्ति उदार हृदय था—उसके मन में किसी प्रकार की आशंका न थी, वह धीरे धीरे चल रहा था।

रास्ते में कई मनुष्य ऐसे मिले जो प्यास के मारे चिल्ला रहे थे। आगे दौड़ने वाले उन दोनों ने प्यासे आदिमियों की पुकार तो सुनी, किन्तु उस पर कोई ध्यान न दिया, जल्दी सोना पाने की धुन में उन्हें दूसरों का कुछ खयाल न था। तीसरा साथी जो पीछे पीछे आ रहा था। उसने एक प्यास के मारे चिल्लाते हुए वृद्ध मनुष्य को रास्ते में पड़ा पाया, उसने तुरन्त ही अपने घड़े में से उसे पानी पिला दिया। आगे चला तो एक स्त्री अपने बालक को गोद में लिए रास्ते में रोती हुई मिली, पूछने पर उसने बताया कि प्यास के मारे मेरा और मेरे बच्चे का दम निकला जा रहा है, उसने उस स्त्री और उसके बच्चे को भी पानी पिलाया। जब झरना थोड़ी दूर रह गया तो उसने रास्ते में एक कुत्ते को पड़ा देखा जो प्यास से छटपटा रहा था, उसने देखा कि यदि कुछ ही देर और उसे पानी न मिलेगा तो जरूर ही उसके प्राण निकल जाँयगे। उसने बचा हुआ सारा गंगाजल उस कुत्ते को पिला दिया और खाली घड़ा लेकर झरने की तरफ चल दिया।

वह सोच रहा था कि तेज चलने वाले मेरे दो साथी झरने पर पहुँच गये होंगे और झरना सोने का हो चुका होगा। पर जब वह वहाँ पहुँचा तो देखा उसके साथी वहाँ तक नहीं पहुचे और झरना भी वैसा ही बह रहा है। साथी कहाँ गये इस चिन्ता में वह इधर उधर घूमने लगा। इतने में वही साधु उस के पास आया और कहने लगा—बेटा! मैं ही कुबेर हूं। तुम लोगों की परीक्षा लेने आया था। रास्ते में जो वृद्ध पुरुष, स्त्री, कुत्ता मिले थे वे और कोई नहीं थे, मैंने ही अपने रूप बना लिये थे और तुम लोगों का हृदय जाँच रहा था। तुम्हारे दोनों साथी अपनी स्वार्थ बुद्धि के कारण पत्थर हो गये हैं और देखो वहाँ पड़े हुए हैं। तुम अपना घड़ा मुझे दो। उस घड़े में एक दो बूँद जो गंगाजल था वह साधु ने झरने में डाला, वह सारा सोने का हो गया। साधु ने कहा—बेटा जितना चाहिये सोना ले जाओ। तुम्हीं सोना पाने के वास्तविक अधिकारी हो, इस लिए तुम्हें ही वह संपदा मैं दे रहा हूं। उन स्वार्थ बुद्धियों को अपना फल भोगने दो।

कथा—

एक कदम नीचे।

(श्री० मंगलचंद भंडारी, अजमेर)

एक स्थान पर दो तपस्वी रहते थे। दोनों ने बड़े प्रयत्न के साथ त्याग तपस्या और वैराग्य का अभ्यास किया था। दोनों इस बात का प्रयत्न करते रहते थे कि कहीं हमारा कदम नीचे की ओर न पड़े अन्यथा दिन दिन नीचे की ओर ही गिरते जायँगे।

एक दिन उनमें से एक तपसी कहीं बाहर जाने लगा। दूसरे ने उससे कहा मित्र आप जाते हैं, आप को तो मन बहलानें के लिए बहुत सी चीजें मिलेंगी, लेकिन मुझे इस जङ्गल में कुछ न मिलेगा। इसलिए आप अपनी गीता की पुस्तक मुझे दे जाइये मैं इसे पढ़ कर दिन काटता रहूंगा। दूसरे ने उसकी बात स्वीकार करली और पुस्तक को उसे देकर चल दिया।

अकेला साधु अपनी कुटी में रहने लगा। एक दिन एक चूहा बिल में से निकला और उसने पुस्तक का एक कोना कुतर डाला। साधु ने जब यह देखा तो उसने सोचा कि कुटी में चूहे बढ़ने लगे हैं इनको रोकने के लिए एक बिल्ली पालनी चाहिये। साधु ने बिल्ली पालली। बिल्ली के लिए दूधकी जरूरत पड़ी। साधु सोच ही रहे थे कि दूध का क्या प्रबन्ध करें। इतने में एक दानी महानुभाव ने दान में एक गौ भेजदी। साधु ने प्रसन्नता पूर्वक उसे स्वीकार कर लिया। अब तो साधु गौ को चराने लगे। उसका दूध खुद पीते रहते और बिल्ली को पिलाते, दिन मजे में कटने लगे, दूध पी पी कर साधु का शरीर खूब तगड़ा होने लगा।

एक दिन एक अनाथ स्त्री उधर जा निकली। उसने साधु से प्रार्थना की भगवन्! मैं अनाथ हूं, मेरी कोई सहायता नहीं करता। आप आज्ञा दें तो यहीं पड़ी रहा करूँ, आपकी तथा इस गौ की सेवा किया करूँगी और जो कुछ बचा खुचा मिला करेगा उसी से अपना निर्वाह कर लिया करूँगी। साधुको उसका प्रस्ताव पसंद आ गया और उसे कुटी में आश्रय दे दिया। धीरे धीरे दोनों की घनिष्टता बढ़ने लगी और उन्होंने पति पत्नी का सम्बन्ध स्थापित कर लिया। समयानुसार उसी स्त्री से कई बाल बच्चे पैदा हुए और उनके भरण पोषण की व्यवस्था के लिये गृहस्थी का सारा सामान इकट्ठा करना पड़ा।

बहुत दिन बाद जब वह साथी जो गीता दे गया था वापिस अपनी कुटी पर आया तो देखा कि वहाँ पूरी गृहस्थी का सामान इकट्ठा है। साधु ने देखते ही ताड़ लिया कि यह गीता के अच्छे बच्चे हैं।

× × × ×

उन्नति का मार्ग ऊँचाई का है। ऊपर चढ़ने के लिये बड़ा प्रयत्न करना पड़ता है और बहुत कठिनाइयाँ सामने आती हैं, किन्तु पतन का मार्ग बहुत सरल है। एक कदम नीचे की ओर रखने पर पाँव बराबर आगे को ही फिसलते जाते हैं। उच्च हिमालय के शिखर पर विराजमान स्फटिक सा स्वच्छ बर्फ जब पिघल कर नीचे की ओर कदम बढ़ाता है, तो क्रमशः नीचे उतरता उतरता पृथ्वी पर आ जाता है, और जैसे जैसे आगे चलता जाता है, गंदे नदी नालों के संयोग से गँदला होता जाता है, यहाँ तक वह पतन के अन्तिम स्थान समुद्र में पहुँच कर दम लेता है और वहाँ उसका वह रूप हो जाता हैं कि मनुष्य तो क्या पशु पक्षी भी उसे न तो पीते हैं न पसंद करते हैं। पतन की ओर एक कदम बढ़ानेका यही परिणाम है। साधु यदि गीता का लालच न करता तो उसे गृहस्थ क्यों बनना पड़ता। हमें चाहिये कि मन में जब कोई छोटी सी बुराई उत्पन्न हो तभी अपने को सँभाल लें अन्यथा उसकी बेल फैल कर अन्त में बड़ी दुखदायी होगी।

गुण का अभाव होना दोष कहलाता है। असलियत में दोष की कोई खास संज्ञा नहीं, श्रेष्ठ काम का न करना ही बुरा है। बुरे का कोई अस्तित्व नहीं है।

× × × ×

बुरे विचारों का निवारण-

(ले०-श्रीरामकरणसिंह वैद्य, जफरापुर)

जीव पूर्व जन्मों में अनेक प्रकार के शुभ अशुभ कार्य कर चुका होता है और भले बुरे दोनों ही प्रकार के संस्कार उसके गुप्त मन पर अङ्कित रहते हैं, तदनुसार दोनों प्रकार के विचार मन में उठा करते हैं। ऐसे मनुष्य मिलना कठिन है, जिनके मन में कभी बुरे विचार उत्पन्न ही न होते हों। बुरे विचार उठें, तो निराश न होना चाहिए, वरन् उन्हें काबू में करने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि विवेक का बल हो, तो बुरे विचारों के अनुसार कार्य नहीं होने पाता और वे मन में उत्पन्न होकर वहीं नष्ट होजाते हैं। किन्तु यदि विवेक निर्बल हो और इन्द्रियों की लालसा बढ़ी हुई हो, तो उस कुसंग के साथ वे बुरे विचार बढ़ जाते हैं और छोटे से बड़ा रूप धारण कर लेते हैं। तरङ्ग स्वयं बहुत छोटी वस्तु है, पर संगति से समुद्र बन जाती है। इसी प्रकार एक छोटा सा बुरा विचार यदि अनियंत्रित होकर कुसंग में पड़ जाय, तो समुद्र हो सकता है और मनुष्य को अपने में डुबा कर नष्ट कर सकता है। बुरे विचारों की बाह्य परिस्थितियाँ भी बड़ा सहारा देती हैं। बुरे स्थान, दृश्य, साहित्य, चित्र और जीव यह सभी कुविचारों को उत्तेजित करने में सहायक होते हैं।

जो मनुष्य अपने जीवन को ऊँचा उठाना चाहते हैं, उन्हें चाहिए कि सतर्कता पूर्वक 'आत्म निरीक्षण' करते रहें, जब कोई बुरा विचार उत्पन्न हो रहा हो, तो उसे तुरन्त ही वहाँ से हटा कर उसके स्थान पर शुभ संकल्प आरोपित करना चाहिए। जिस प्रकार बिच्छू के कपड़े पर चढ़ते ही उसे हटाने का अविलम्ब प्रयत्न करते हैं, उसी प्रकार बुरे विचार को मन में उत्पन्न होते ही हटा देना चाहिए, तभी हम जीवन लक्ष तक पहुँच सकेंगे।

कौन क्या कहता है?

(ले०-पी० जगन्नाथराव नायडू, नागपुर)

लोग क्या कहते हैं? इसके आधार पर किसी कार्य की भलाई-बुराई का निर्णय नहीं किया जा सकता। क्यों कि कई बार लोग अच्छे कार्यों की बुराई करते हैं और बुरों की भलाई। कारण भले बुरे की वास्तविक पहिचान हर किसी को नहीं होती। हम जो काम करें, उसके लिए यह न देखें कि कौन क्या कहता है?, वरन् यह सोचें कि हमारा आत्मा इसके लिए क्या कहता है। यदि आत्मा गवाही दे कि हम जो कार्य कर रहे हैं उत्तम है और हमारी बुद्धि निस्वार्थ है, तो बिना किसी की परवाह किये हुए हमें अपने कार्य में प्रवृत्त रहना चाहिए।

यदि शुभ मार्ग में बाधाएं आती हों और लोग विरोध करते हों, तो घबराइये मत और न ऐसा सोचिए कि हमारे साथ कोई नहीं, हम अकेले हैं। शुभ कार्य करने वाला कभी अकेला नहीं है। अदृश्य लोक में महान् पुरुषों की प्रबल शक्तियाँ विचरण करती रहती हैं, वे हमें उत्तम पथ देखती हैं, तथा हमारी सहायता के लिए दौड़ पड़ती हैं और इतना साहस भर देती हैं कि एक बड़ी सेना का बल उसके सामने तुच्छ है। चोर घरके लोगों के खाँस देने से ही डर कर भाग जाता है, किन्तु धर्मात्मा मनुष्य मृत्यु के सामने भी छाती खोल कर अड़ा रहता है। सत्यनिष्ठ की पीठ पर परमेश्वर है। धर्मात्मा मनुष्य किसी भी प्रकार न तो अकेला है और न निर्बल। क्योंकि अनन्त शक्ति का भण्डार तो उसके हृदय में भरा पड़ा है।

कलियुग की अन्तिम घड़ी

(श्री० श्यामबिहारीलाल रस्तोगी, बिहार शरीफ़)

जिस प्रकार रात्रि के बाद दिन, पतझड़ के बाद बसन्त, मृत्यु के बाद नवजीवन प्रदान करना प्रकृति और प्रभु का अविराम नियम है, उसी प्रकार कलियुग की अन्तिम घड़ी समाप्त होने पर सतयुग का आना अनिवार्य है।

वर्तमान समय में जितनी भी बातें हो रही हैं, सभी कलियुग की अन्तिम घड़ी के लक्षण प्रमाणित कर रही हैं। हरिवंश पुराण के भविष्यखण्ड के दूसरे, तीसरे और चौथे अध्याय में व्यासदेवजी ने राजा जन्मेजय से युगान्त का जितना भी लक्षण बतलाया है, उस पर विचार करने से पता चलता है कि, कलियुग की अन्तिम घड़ी आ पहुँची।

युगान्त लक्षण के सर्व प्रथम श्लोक हैं—

(१) अरक्षितारो हर्तारो बलिभागस्य पार्थिवोः।
युगान्ते प्रभविष्यन्ति स्वरक्षण परायणाः ॥५॥

प्रजा की रक्षा करने से रहित, बलिभाग ग्रहण करने वाले, अपनी रक्षा में निपुण राजा युगान्त में उत्पन्न होंगे

वर्तमान काल में जितने भी सम्राट् हैं, वह प्रजा की रक्षा करने में असमर्थ हैं। उनकी असमर्थता का ही प्रमाण है कि सभी राज्यों में लूट, डाका, मार, चोरी तथा अपहरण का बाज़ार गर्म है। हां, सम्राटगण इस समय अपनी रक्षा में निपुण अवश्य हैं। क्यों कि जल, थल, आकाश सभी से भयानक युद्ध हो रहा है, पर सम्राटों को कुछ नहीं होता। यह प्रमाणित करता है कि कलियुग की अन्तिम घड़ी है।

(२) अक्षत्रियाश्च राजानो विप्राः शूद्रोप जीविनः।
शूद्राश्च ब्राह्मणाचारा भविष्यन्ति युगक्षये ॥६॥

युग-क्षय के समय अक्षत्री राजा होंगे, ब्राह्मण शूद्रों से अपनी जीविका चलायेंगे और शूद्रों के आचार ब्राह्मणों के से होंगे।

गये गुज़रे इस ज़माने में भी ब्राह्मणों की जितनी इज़्ज़त शूद्रों में है, उतनी अन्य क़ौमों में नहीं। फलस्वरूप शूद्रों से भी पूजा इत्यादि द्वारा ब्राह्मणों को काफ़ी पैसे मिल जाया करते हैं, जिससे उनके जीवन-निर्वाह में सहायता प्राप्त होती है। शुद्ध आचरण के शूद्रों को यदि तलाश किया जाये, तो ताज्जुब नहीं कि इनकी संख्या शुद्धाचारी ब्राह्मणों से भी बढ़ जाये, फिर भी ऐसी अवस्था में लोग कहते हैं कि कलियुग खतम होने में देर है। यह खेद की बात नहीं, तो और क्या है?

काण्डे स्पृष्टाः श्रोत्रियाश्च निष्क्रियाणि हवींष्यथा।
एक पंक्तयामवशिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥७॥

श्रोत्रिय ब्राह्मण शस्त्रधारी होंगे, हवि पञ्च-यज्ञ हीन होंगे, हे जन्मेजय! युगान्त में सब लोक एक पंक्ति में बैठकर भोजन करेंगे।

इस समय यह सभी लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं, इससे प्रतीत होरहा है कि यह कलियुग की अन्तिम घड़ी है।

हम किसी की परवाह क्यों करें? यदि हम सत्य और धर्म के मार्ग पर आरूढ़ हैं, यदि हमारा आत्मा पवित्र है, तो हमें निर्भयता पूर्वक अपने पथ पर आगे बढ़ते जाना चाहिए और इस बात की ओर कुछ चिन्ता न करनी चाहिए कि कौन क्या कहता है।

सूक्ष्म शरीर की शक्ति

इस लोक में जब किसी प्राणी को मरजाने का फतवा दे दिया जाता है और उसकी अन्त्येष्टि क्रिया पूरी कर दी जाती है, तब भी यथार्थतः वह मरता नहीं और इसी प्रकार जीवित रहता है जैसे कि मृत्यु से पूर्व था। प्याज के पर्तों को अगर ऊपर से हटाते जाँय तो उस में भीतर और पर्त रह जाते हैं। मानवीय शरीरों के कई पर्त हैं, जिन्हें सूक्ष्म, कारण और लिंग शरीरों के नाम से पुकारते हैं। मृत्यु के बाद स्थूल शरीर तो मर जाताहै, परन्तु सूक्ष्म शरीर बना रहताहै। आगामी जीवन की तैयारी के लिये अक्सर मृत प्राणी तन्द्रित अवस्था में पड़े रहते हैं, ताकि विश्राम कर के भविष्य के लिये शक्ति सम्पादन कर लें, किन्तु जैसे कई करणों से कभी-कभी रात्रि भी जागते हुए व्यतीत होजाती है, उसी तरह कुछ मृत व्यक्ति भी चैतन्य बने रहते हैं और जीवित प्राणियों के कार्यों में बड़ी दिलचस्पी लेते हैं।

यही चैतन्य शरीर भूत प्रेतों के रूप में परिचय देते हैं। कभी-कभी इनके कार्य ऐसे होते हैं जिन से हैरत में पड़ जाना होता है। भारतवासी प्राचीन काल से सूक्ष्म शरीरों की सत्ता स्वीकार करते आ रहे हैं। किन्तु पश्चिमीय जड़ विज्ञान केवल स्थूल शरीर को ही जीव मानता है। इसके अतिरिक्त किसी सूक्ष्म शरीर या आत्मा का होना नहीं मानता था, पर अब प्रत्यक्ष अनुभवों ने उसे भी इस बात के लिये मजबूर कर दिया है कि मरणोत्तर जीवन को स्वीकार करे।

कुछ दिन पूर्व सेन फ्रांसिस्को से निकलने वाले 'एक्झानिर' नामक पत्र में इस सम्बध में एक महत्व पूर्ण समाचार छपा था, उसका भावानुवाद नीचे दिया जाता है—

"टामस वेल्टन स्टेन फोर्ड, नामक एक धनी महानुभाव जो आस्ट्रेलिया के मेल्वोर्न नगर में रहते थे, संग्रह करने की रुचि के कारण बहुत ख्याति प्राप्त कर चुके थे। उन्होंने अपने अजायब घर में देश विदेश की ऐसी-ऐसी वस्तुऐं संग्रह की थीं, जिनका साधारणतः प्राप्त करना कष्ट साध्य-ही नहीं, असाध्य भी था। इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि यह दुर्लभ वस्तुऐं उन्होंने प्रेतात्माओं की सहाहयता से एकत्रित की थीं।

स्टेन फोर्ड के नगर में ही एक सी० बेइली नामक लुहार रहता था, जिसने प्रेतात्माओं से सम्बन्ध स्थापित करने में बड़ी सफलता प्राप्त की थी। मि० फोर्ड उस से मिले और जब इस बात का विश्वास हो गया कि सचमुच इसके साथ प्रेत रहते हैं, तो उन्होंने उससे लुहारी छुड़वा करऊँची तनुख्वाह पर अपने यहां नौकर रख लिया। उस लुहार ने फोर्ड साहब को भी अपने प्रयोगों में शामिल किया। एकान्त और अँधेरे कमरे में जब प्रयोग किये जाते तो कमरे के कोने, छत, फर्श या बाहर से अनेक प्रकार के शब्द एवं प्रकाश प्रकट होते हैं। वे आत्माऐं मनुष्यों की तरह बात चीत भी करतीं और अपने शरीरों सहित प्रकट भी होतीं। यह बात जब चारों ओर फैलने लगी तो बहुत से जिज्ञासु उसे देखने आते। चूँकि इस कार्य में कोई छल कपट का व्यवहार न था, इस-लिये दर्शकों के समस्त सन्देहों को निवारण करने का पूरा-पूरा अवसर दिया जाता और वे अन्ततः पूर्ण रूप से सन्तुष्ट होकर मृतात्माओं के आस्तित्व पर विश्वास करते हुए घर लौट जाते, इच्छानुसार प्रेतों से दूर-दूर की वस्तुऐं भी मँगाई जातीं और एक मिनट से कम समय में उन्हें लाकर हाजिर कर देते। एक बड़े जलसे में दर्शकों ने बड़ी विचित्र चीज़ें माँगी। वे सभी एक क्षण भर में लाकर उप-स्थित की गईं। एक दर्शक ने हिन्दुस्तान में ही पैदा होने वाली चिड़ियाँ मांगी। प्रेत ने घोंसलों समेत उन चिड़ियाओं को इतनी संख्या में पटका कि सारा कमरा उनकी चें चें से गूंज उठा। उसी तरह हजारों वर्ष पुराने सिक्के, ब्रह्मा के

माणिक्य, काशी के जीवित कछुए, राजहंस के जोड़े, समुद्र के खारी पानी से भीगी हुई शार्क मछली, भारत में खाई जाने वाली गरम रोटी यह सब वस्तुऐं हाजिर करदीं। जिनसे दर्शकों को पूरा विश्वास होगया कि यह प्रेत का ही कार्य है।

इन चमत्कारों की चर्चा उस देश के ऊंचे लोगों तक पहुँची, और उनकी विज्ञान परिषद् ने फोर्ड और बेइली को इस बात के लिये ललकारा कि यदि उनकी बात सच है तो एक विशाल प्रदर्शनी में उनके सामने सिद्ध कर दिखावें। फोर्ड ने उनकी चुनौती स्वीकार करली और मेल्वार्न नगर की उस सब से बड़ी प्रदर्शनी में जिसमें देशभर के प्रख्यात् तार्किक, वैज्ञानिक, अन्वेषक, और शोधक उपस्थित थे, प्रेतों के करतब दिखाये और उनकी माँगी हुई ऐसी वस्तुऐं जिनके बारे में किसी को ख्याल तक न था, सभा मंडप में लाकर उपस्थित करदी गईं। इन वस्तुओं में दूर दूर देशों के वह अखबार भी थे, जो ठीक उसी समय उन स्थानों में छप रहे थे। इन चमत्कारों को देखकर शीया पेरेली, काउंट बाउडी डिवेस्मे, प्रोफेसर फरल कमेर, जिग्नोरा, बरजीनिया पेंगे, प्रो० रोसी डिगिस्टी नियानी, सरीखे गन्यमान्य पुरुषों को यह बात मुक्त कंठ से स्वीकार करनी पड़ी कि इसमें रत्ती भर भी छल कपट नहीं है, और यह किसी अदृश्य शक्ति का ही काम है।

एक फोर्ड या बेइली ही नहीं, अनेक महानुभाव प्रेतात्माओं के कार्यों का प्रत्यक्ष अनुभव कर चुके हैं। आत्मा को न मानने वाले जड़ विज्ञान के अन्वेषकों में से भी जिन लोगों ने इस तत्व का अन्वेषण किया है उनमें से अधिकांश को अपना अविश्वास छोड़ना पड़ा है। डार्विन का साथी कार्य कर्ता और पदार्थ विज्ञान को अग्रिणी विद्वान् आल्फ्रेट रसेल वालेस, इग्लैण्ड के रायल सोसाइटी की सदस्य और फ्रान्स की एकेडेमी आफ साइन्स से स्वर्ण पदक प्राप्त एवं रेडियो मिटर, आथियोस्कोप सरीखे यंत्रों के आविष्कारक प्रोफेसर विलयम क्रुक्स, हार्वर्ड विद्यालय के प्रोफेसर जेम्स, कोलम्बिया विद्यालय के प्रोफेसर हिर लोप, खगोल विद्या के आचार्य केमिल फ्लेमेरियोन, आयर्लैण्ड के वैज्ञानिक प्रो० बेरेट आदि अनेक महानुभावों को उनके अपने अनुभवों ने इस बात को मानने के लिये मजबूर कर दिया है, कि मनुष्य का सूक्ष्म शरीर भी होता है। और उनकी सामर्थ्य अद्भुत एवं सत्यता से परिपूर्ण होती है।

निकट भविष्य में जितनी जितनी इस विज्ञान की खोज होती जायगी, सूक्ष्म शरीर के सम्बन्ध में अद्भुत सत्यता का प्रकाश हमारे सामने आता जायगा।

ध्येय की सिद्धि

(कुमार गोविन्दानुज)

–प्रवाह के साथ दीप बहते आरहे थे।

–उनकी मंशा थी कि-समुद्र में जाना और वहां के छिपे हुए रत्नों को ऊपर लाने के लिये प्रकाश दिखाना।

–आते आते कुछ बुझ गये, कुछ डूब गए, कुछ फूट गए।

–बचे हुए आरहे थे, आगे बढ़ रहे थे।

–उनके सामने एक आदर्श था।

–बीच में एक चट्टान आड़े आई और वे वहीं अटक गए।

–उनको लगा—"हाय हमारा ध्येय ?"

–वहीं से प्रकाश दिखाने का उन्होंने निश्चय किया।

–उसी समय एक रत्नों से भरा जहाज आरहा था।

–वह उस बड़ी चट्टान से टकरा कर नष्ट हो जाता, मगर दीपों के प्रकाश से बच गया।

–और थोड़ी ही देर में वे दीप भी बुझ गये।

–बुझते समय-मरते समय-वे सोच रहे थे– "ध्येय की सिद्धि होगई ?" —नई दुनियाँ

भीरुता का अभिशाप

(श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी
भू० पू० गृह मंत्री बम्बई प्रान्त)

देश के समस्त सम्प्रदायों और हितोंका एक महान् राष्ट्रीय दृष्टि से उचित सामंजस्य किये बिना देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता का पूर्ण होना असम्भव है। किन्तु भारत को बाँटने की नीति का मैं कट्टर विरोधी हूँ, क्योंकि वह देश के अस्तित्व तथा भविष्य दोनों के लिये हानिकर है। मेरा यह भी विश्वास है कि भारत को बांटने की मांग का मुख्य ध्येय है-इस देश के हिन्दुओं की स्थिति और प्रभाव को नष्ट करना। बांटने वालों की अभिलाषा यही है कि भारतीय शासन में मुस्लिम बहुमत हो या कम से कम उनका स्थान बराबरी का हो और हिन्दू बहुमत एक अल्पमत में परिवर्तित हो जाय। और हिन्दू जब तक असंगठित रहेंगे, इस घातक अभिलाषा का डट कर सामना नहीं कर सकेंगे। यदि हिन्दू तथा ऐसे ही राष्ट्रवादी सिक्ख, ईसाई, व मुसलमान जिनके प्रयत्नों से अखण्ड हिन्दुस्तान स्वाधीनता की ओर बढ़ने वाला है, देश को बाँटने वाली विषाक्त नीति से भयभीत हो जाँय तो इस पृथ्वी पर उनका जीवन रहने के योग्य न रह जायगा।

हिन्दुओं को एक भयंकर भविष्यका सामना करना है। नई समस्याओंके पैदा होने से उन प्राचीन शक्तियों का जिन्होंने हमें एकता का पाठ पढ़ाया अब ह्रास हो चुकाहै। वर्णाश्रम धर्म जो हमारी सामाजिक व्यवस्था की रीढ़ था औा जो विभिन्न सामाजिक वर्षों के सहयोग के आधारपर बना था अब अपनी शक्तिंखोचुका है। हमारा समाज तो अब एक दूसरे के प्रति अविश्वास करने वाले वर्गों का एक समूह बन गया है। हुमारे समाज की एकता प्रान्तीयता तथा भाषाविभिन्नता के कारण खण्डित हो चुकी है। संस्कृत भाषा, पुराणों की परिपाटी तथा आर्यों की सभ्यता ने भारत को जो एकता प्रदान की थी उसे बाहरी राष्ट्रों ने आकर विच्छिन्न कर दिया। सहिष्णुता के नाम पर हमने अपनी सामाजिक व्यवस्था को निर्जीव कर दिया है। समाज के विभिन्न वर्ग अब उसके जीवन को सुदृढ़ नहीं बना सकते। अर्वाचीन परम्परागत रूढ़ियां जो हमें कठिन से कठिन समयों में बचाती रही हैं, अब अपनी शक्ति खो बैठी हैं। हम पश्चिम की नकल करते हैं। विदेशी सत्ता के आगे घुटने टेक देना ही अब हमने सीखा है। हम यह नहीं अनुभव करते कि यह हमारे लिये कितना घृणास्पद है। अपनी असहाय अवस्था में हम चिल्लातेहैं, औरों के आगे हाथ फैलाते हैं तथा अपने को दोष देते हैं, किन्तु यह नहीं जानते कि अपनी शक्तिका संचय कैसे करें। हमें आज संसार के इतिहास से सबसे भयंकर कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है।

एक और—केवल एक—नई शक्ति जिसका हमने अन्य सम्प्रदायों के सहयोग द्वारा उपार्जन किया था, वह थी राष्ट्रीयता की शक्ति। किन्तु अब यह चौमुहानी पर खड़ी है। सदियोंके प्रयत्नों को कुछ उन्मत्त राजनीति के रथ में धर्मान्धता का पहिया लगा कर भारत की इस एकता को नष्ट करना चाहते हैं। कोई भी देशप्रिय भारतीय चाहे वह हिन्दूहो या मुसलमान, सिक्ख हो या ईसाई, इसे शान्ति के साथ सहन नहीं कर सकता। अखण्ड हिन्दुस्तान एक वास्तविक सत्य था और है और इसको सदैव ऐसा रखने के लिये हम सबको अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा देनी चाहिये।

किन्तु भारत विच्छेद के विरोध में सब से बड़ी रुकावट बांटने वालों की दुर्नीति नहींहै, बल्कि हिंदुओं की भीरुता है। हम हिन्दुओं का स्वभाव होगया है कि हम दबकर चलना सीख गये हैं। हमारा साहस नष्ट हो चुका है। हम वास्तविकता की कठोरता से छुटकारा पाने के लिये शाब्दिक भ्रम पैदा करने लगते हैं। हमारा यह स्वभाव सा होगया है कि जब तक हमें कोई काम मिलता रहे या रुपया पर सूद आता रहे,हम सब आत्मसम्मान पर लगने वाली ठोकरों को सहन करते रहते हैं।

मैं एक आधुनिक दृष्टान्त आपके सामने रखता हूं। सर सिकन्दर ने अपने प्रयत्नों से केन्द्रीय सरकार में हिन्दू और मुसलिम के ३६:३३ के अनुपात को ५६:४४ में परिणत कर दिया। हिन्दू और अहिन्दू में तो यह अनुपात ५०:५० का है जब कि देश में हिन्दू ७५ प्रतिशत हैं। हिन्दू अपने जन संख्या के आधार पर स्थित नैसर्गिक अधिकारों को भूल कर इसी में प्रसन्न हैं कि वे एक दम भुलाये नहीं गये हैं। वास्तव में हिन्दुओं में सर सिकन्दर की तरह हिम्मत नहीं है, अन्यथा ये इस प्रकार से तिरस्कृत और उपेक्षित न होते।

यदि देश के बाँटने का भय दिखलाया जाता है, तो हम उस भय को भगाने से बचने के लिये बहाने निकालते हैं, हमें भय दिखलाया जाता है कि हम जुलूस निकालने का अधिकार छोड़ दें, बाजा बजाने का आनन्द छोड़दें, संस्कृत शब्दों के प्रयोग को छोड़ दें, बन्देमातरम्' का आनन्ददायक गायन बन्द कर दें और हिन्दी भाषा के प्रयोग के अपने जन्मसिद्ध अधिकार को त्याग दें। हम लोगों की यह कहने की आदत पड़गई है कि "अरे भाई इसे जाने दो, अन्यथा और बड़ी आफत आयेगी" हमारी भीरुता को ढंकने के लिये कोई न कोई बहाना निकल ही आता है।

किसी ने एक समय कहा था कि हिन्दू एक मृतप्राय जाति है। जब तक हम अपनी भीरुता दूर नहीं करते हम मरे से भी गये बीते हैं। हम आत्मा विहीन हैं। हम लोग जीवन को सुन्दर बनाने वाले सभी साधनों को त्यागने के लिये बाध्य किये जायेंगे, दबाये जायेंगे। राष्ट्रीयता जिसके आधार पर भारत अपना भविष्य बनाना चाहता है, तब तक उन्नति नहीं कर सकती जब तक कि हम अपनी भीरुता को न छोड़ेंगे, जब तक कि हम अपनी सभ्यता के प्रति सच्चे न रहेंगे, और जब तक कि हम आने वाली सारी धमकियों का डट कर मुकाबिला न करें हमारी एक स्वतन्त्र भाषा है, हमारा एक धर्म है, एक सामाजिक व्यवस्था है और सब से ऊपर एक देश है। हम इसी आधार पर औरों से सहयोग कर सकते हैं कि जो हमारे गौरव की वस्तु है उसमें कोई धक्का न लगे, और भारत जो हमारी पवित्र भूमि है, एक सम्बद्ध और अविभाज्य देश बना रहे।

हमारा एक सच्चा हिन्दू होना राष्ट्रीयता के मार्ग में उसी प्रकार बाधक नहीं है, जैसा कि एक सच्चे मुसलमान का राष्ट्रीय होने में। हम हिन्दुस्तानी अहिन्दू जातियों के साथ रहना चाहते हैं और चाहते हैं सब के प्रयत्नों से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता। लेकिन हम अपनी जाति, अपने धर्म एवं अपनी सभ्यता को छोड़ने को तैयार नहीं। हम अपने देश को स्वतन्त्र और शक्तिशाली भी बनाना चाहते हैं और चाहते हैं अपनी सभ्यता और संस्कृति का ऐसा फैलाव कि वह दुनियां का अपना सन्देश सुना सके।

यदि हिन्दुत्व एक खोखली वस्तु है तो हमें मुसलमान हो जाना चाहिये और यदि वास्तव मे हिन्दुत्व का कोई अर्थ है और उसका कोई सन्देश है, तो हम यह कभी सहन नहीं कर सकते हैं कि दुनियाँ की कोई शक्ति उसे अखण्ड हिन्दुस्तान की पवित्र भूमि से उखाड़ फेंकने का प्रयत्न करे।

जीवन समय का सदुपयोग करने पर ही बड़ा होता है। सो समय का दुरुपयोग करता है चाहे उसकी जिन्दगी बड़ी है। किन्तु छोटी ही है कर्म युक्त जीवन बड़ा जीवन है। आलस्य ही मृत्यु है।

× × × ×

प्रत्येक से प्यार करो, थोड़े में सन्तोष रखो किसी को भी दुःख न देना चाहिये।

× × ×

सत्य के दीपक को हाथ में लेकर बढ़े चलो कभी गिर नहीं सकते हो।

× × ×

जिस तरह नदी के एक चल्लू भर पानी में उसके सभी गुण होते है। उसी तरह पुरुष में भी प्रभु के सब गुण होते हैं।

× × ×

निराश मत करिये

(श्री स्वेट मार्डन)

जो व्यक्ति आज तुम्हारी ही तरह होशियार और चतुर नहीं हैं उसे न तो निरुत्साहित करो और न उसका मजाक बनाओ। जो आदमी इस समय गधा, आलसी या मूर्ख प्रतीत होता है। यदि वह उचित अवसर पावे तो एक दिन बहुत ही बुद्धिमान सिद्ध हो सकता है। किसी की भूलों के लिये उसे तिरस्कृत मत करो वरन् उसे उत्साह देकर सन्मार्ग पर प्रवृत्त करने की चेष्टा करो।

गोल्ड स्मिथ, मास्टर लोगों की हँसी मजाक का साधन था। लड़के उसे 'लकड़ी का चम्मच' कहकर चिढ़ाते थे। वह डाक्टरी पढ़ता था, पर बार बार असफल होजाता। वास्तव में उसकी रुचि साहित्य की ओर थी। इन असफलता के दिनों में वह एक पुस्तक लिखने लगा। डाक्टरि जानसन के कृपापूर्वक उसकी प्रथम कृति 'विकार आफ वेक फील्ड' एक प्रकाशक को विकवा कर उसको ऋण मुक्त कराया। इस रचना ने गोल्डस्मिथ को कीर्ति ससार भर में फैलादी। सर वाल्टर स्काट का नाम मास्टरों ने 'मूढ़' रख छोड़ा था। उसी मूढ़ ने ऐसी अद्भुत पुस्तकों की रचना की है जो सैकड़ों शिक्षकों को शिक्षा दे सकती है। वेलिंगटन की माता उसकी मूर्खता से दुखी रहती थी। ईटन के स्कूल में वह बड़ा आलसी और बुद्धिहीन विद्यार्थी समझा जाता था। सेना में भरती हुआ तो प्रतीत होता था कि यह इस कार्य में भी अयोग्य साबित होगा, किन्तु उसने आश्चर्य जनक सैनिक योग्यता संपादित की और ४६ वर्ष की आयु में दुनियां के सबसे बड़े सेनापति को हरादिया।

आरंभ में कोई व्यक्ति अयोग्य दिखाई पड़े तो यह न समझना चाहिये कि इसमें योग्यता है ही नहीं या भविष्य में भी प्राप्त न कर सकेगा। यदि उचित प्रोत्साहन मिले और उपयुक्त साधन वह प्राप्त करले तो हो सकता है, कि आज नासमझ कहलाने वाला आदमी कल सयानों के कान काटने लगे।

किसी की बुद्धि पर मत हँसो वरन् उसकी त्रुटियों को सुधारने का प्रयत्न करो। तुम्हारे द्वारा लांछित अपमानित या निरुत्साहित होने पर किसी का दिल टूट सकता है, किन्तु उसे किसी प्रकार से यहाँ तक कि वाणी से भी प्रोत्साहित करते रहो तो मनुष्य देहधारी प्राणी के असाधारण उन्नति कर जाने की बहुत कुछ आशा की जा सकती है।

एक बुद्धिमान शिक्षक कहता है कि छोटेपन में मैं सोचा करता था कि बादलों के गरजने से मृत्यु होती है पर बड़ा होने पर मुझे पता चला कि मृत्यु का कारण बादल नहीं, बिजली है। बस, उसी दिन से मैंने गरजना कम कर दिया और चमकना शुरू कर दिया।

× × × ×

सर वाल्टर रेले से एक व्यक्ति ने पूछा—"आप इतना अधिक काम इतने कम समय में कैसे कर डालते हैं?" सर रेले ने उसे उत्तर दिया—मुझे जो कुछ करना होता है, उसे उसी क्षण कर लेता हूँ। आज के काम को कल पर नहीं टालता।

× × × ×

'कल' शैतान का दूत है। इतिहास से प्रकट है कि इस 'कल' की धार पर कितने प्रतिभावानों का गला कट गया। कितनों की योजनाऐं अधूरी रह गईं। कितनों के निश्चय जवानी जमा खर्च रह गये। कितने 'हाय कुछ न कर पाया' कहते हुए हाथ मलते रह गये। 'कल' असमर्थता और आलस्य का द्योतक है।

× × × ×

किसी के सम्बन्ध में दूसरे से ऐसी बात मत कहो, जो उसके मुंह पर नहीं कह सकते।

× × × ×

कलियुग समाप्ति की साक्षियां

(श्री रतनलाल जी नैष्ठिक वैद्य, मथुरा)

कलियुग समाप्त होने और सतयुग आने में अब देर नहीं है। इस संबंध में बहुत से प्रमाण प्राप्त होते हैं। उनमें से तीन यहां दिये जाते हैं। पाठकों को वास्तविक स्थिति के जानने में इन प्रामाणिक साक्षियों से मदद मिलेगी।

(१) सूरदासजी ने लिखा है—

अरे, मन धीरज क्यों न धरे।
एक सहस्र नौ सै के ऊपर यह संयोग परै॥
मेघनाथ रावण का बेटा, पूरब जन्म धरै।१॥
हिन्दू तुरक तेज को नासै जैसे कीट जरै॥
भूप उपाय करें सब मिलके टारे नाहिं टरै।२॥
चारों धाम आनन्द में फेरे बहु विधि राज करै॥
बीसी रुद्र होमगति सारी ब्रह्म प्रकाश करै।३॥
शुक्ल नाम संवत जब आवै छठि सोमवार परै॥
फूटै फौज मलेच्छ राजकी दुन्दुभि सदा करै।४॥
प्रजा राजानाश सबन सों देश मलिच्छ हरै॥
दक्खिन फौज फेरि ब्रज आवे कछु दिन राज करै।५॥
कछुक दिनन में ऐसी होवे आपहि आय गिरै॥
हलधर पुत्र परम सुख उपजै देहली छत्र फिरै।६॥
अस्सी बरस को सतयुग होवे धरम की बेलि बढ़ै॥
नीति धरम सुख आनन्द होवे अमरन सुख उपजै।७॥
सूरदास हौनी सो होवै काहे को सोच करै॥

(२) अध्यात्मक तत्वों के मर्मज्ञ स्वर्गवासी लोकमान्य तिलक लिख गये हैं, कि "आजकल का समय तो अवतार आने का है, और कलियुग इतने लाखों वर्षों का नहीं जितना कहा जाता है"।

(३) मुसलमानों की मजहबी किताब मकसूम बुखारी में लिखा है, कि १४ वीं सदी हिजरी की दूसरी तिहाई में कयामत आयेगी (कयामत का मतलब है कि पापी कोई न रहेगा) जो २००० वि० श्रावण की हिजरीसन चौदहवीं सदी की दूसरी तिहाई खतम हो जाती है।

हजरत मुहम्मद साहब

(मेल मिलाप)

हजरत मुहम्मद साहब अक्सर दुआ (प्रार्थना) में फरमाया करते थे—"खुदावन्द! मुझे गरीब जिन्दारख, गरीब उठा और गरीबों ही के साथ मेरा हश्र कर।" हजरत आयशा ने पूछा "या रसूल अल्लाह! क्यों?" उन्होंने उत्तर दिया—"इसलिये कि ये गरीब दौलतमंदों से पहले जन्नत में जायंगे"। फिर फरमाया—"ऐ आयशा! किसी गरीब को अपने दरवाजे से मायूस यानी बिना कुछ दिये न फेरो, गो छुहारे का एक टुकड़ा ही क्यों न हो। ऐ आयशा! गरीबों से मुहब्बत रखो और इनको अपने से नजदीक करो तो खुदा भी तुमको अपने से नजदीक करेगा।"

× × × ×

एक बार एक आदमी ने हजरत मुहम्मद साहब से मिलने की इजाजत चाही। आपने फरमाया—"अच्छा आने दो! वह अपने कबीले का अच्छा आदमी नहीं है।" लेकिन जब वह आपकी खिदमत में हाजिर हुआ तो आपने निहायत नरमी के साथ उससे बात चीत की। हजरत आयशा को इस पर ताज्जुब हुआ। उन्होंने पूछा—'या रसूल अल्लाह! आप तो इसको अच्छा नहीं समझते थे, फिर ऐसी नरमी और प्रेम के के साथ आपने उससे बातें की?" आपने फरमाया—"खुदा के नजदीक सबसे बुरा शख्श वह है जिसकी बद जुबानी की वजह से लोग इससे मिलना जुलना छोड़दें।"

सोना दो आना तोला

(श्री गोविन्दशरण वर्मा)

आज कल अखबारों में नकली सोने के बड़े लम्बे चौड़े नोटिस निकल रहे हैं। साधारण जनता समझती है कि यह भी असली सोने की तरह कहीं खान से निकलता होगा। नामों से प्रगट होता है कि यह माल हिन्दुस्तान का नहीं, बल्कि गैर मुल्कों का बना हुआ है। 'न्यू अमेरिकन गोल्ड, न्यू फ्रान्स गोल्ड, न्यू चाइना गोल्ड, आदि इस बात का सबूत है। मगर हम साबित करने को तैयार हैं कि यह सोना इन व्यापारियों के घरों में ही बनता है। फैशन की अन्धी दुनियाँ ने इसे देखने की कोशिश नहीं की कि यह क्या है? यह एक प्रकार की पीतल है। प्रमाण के लिये आपके सामने इन गोल्डों के नुस्खे पेश किये जा रहे हैं। अगर नकली सोना पहने और काम न चले, तो अपने घर पर तैयार कर लें। यह सोना उन्हें =) तोले के हिसाब से पड़ जायगा।

नुसखे।

(१) एक तोला बढ़िया तांबा और तीन माशे जस्त रख कर गलालें।

(२) नौ मांसे ताँबा, २ मासे चाँदी, और एक माशे जस्त मिला कर गलालें।

(३) सात माशे तांबा, ५ माँशे पीतल, गलने पर २ रत्ती अलमोनियम रखदें।

(४) सोटिंग तांबा ६ माशे, पीतल ५ माशे, चांदी ३ रत्ती, जस्त ३ रत्ती मिला कर गलालें।

लेकिन यह ध्यान रहे कि इसे ऐसे व्यक्ति से गलवाएं जो कि ताँबा गलाना जानता हो। सब मिल कर गलने के बाद प्रत्येक व्यक्ति गला सकता है। गलने से थोड़ी देर पहले गोटे के तार रखवादें, तो जल्दी भी गल जायगा और अच्छा रहेगा। एक जगह के एक जल्दबाज ने तो नल की पुरानी टोंटियाँ ही खरीद कर गलवा डालीं और नोटिस बाजी शुरू करदी। यह तो रही बाजारू के नकली गोल्ड की बात, अब हम आपको एक उत्तम नुसखा बताते हैं।

ताँबा ६ माँशे, चाँदी २ माँशे और सोना १ माँशे मिला कर गलवा लीजिये तो बहुत बढ़िया रंग आजायगा और काला भी न पड़ेगा।

———

—पोल